

शिथिलाचार से अपने को उंचा उठाकर सुविदित मार्ग में नय चेतना का संचार किया था। जन साधारण के व्यवहार के लिये आपने अनेक उपयोगी ग्रन्थों की रचना की थी। आपके शिष्य धर्मांडजी के शिष्य राजसागरजी ने चरित्र-नायक ने दीक्षा ग्रहण की थी और उनके शिष्य श्रद्धिसागरजी के शिष्य रूप में आप प्रसिद्ध हैं।

स्वर्गीय मुनिवर्य भी मुखसागरजी का जन्म सं० १८७६ में सरस्वती पत्तन (सरसा) नामक स्थान में हुआ था।

आपके पिताभी का नाम मनसुल्लालजी व मातुभी का नाम जेती बाई था। ओसवाल जाति के दूगड़ गोत्र के आप रान थे। आपके बाल्यायथा में प्रवेश से पूर्व ही माता पिता दोनों का वियोग हो गया अतः अपनी बहिन के आपद से वे जयपुर में आ गये व गोलछा माणिक्यचंद्रजी, लक्ष्मी-चंद्रजी की सहायता से किरायण का व्यवहार करने लगे थोड़े समय में ही अपनी व्यवहार कुरालता से आप उनके यहाँ मुनीम जैसे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर सुरोभित हो गये।

बाल्यायथा से ही आप की रुचि धर्म ध्यान की ओर विशेष थी इसीसे पिताभी के अनुरोध करने पर भी आप ने विवाह करना स्वीकार नहीं किया था व सामायिक, पूजा, तपश्चर्यादि में संलग्न रहते थे। सं० १९०६ में जयपुर में मुनि भी राजसागरजी व श्रद्धिसागरजी का चातुर्मास हुआ। फलतः आपकी धर्मभावना के सोचन का शोभन सुयोग प्राप्त हो गया। अपनी बड़ती भावना से आपने मुनि-भी से साधु धर्म स्वीकार करने की उत्कण्ठा प्रगट की। उन्होंने भी आपको वैराग्यवान् व दीक्षा की उत्कट भावना याला शात कर चातुर्मास होने पर भी आपके आपद को स्वीकार किया।

नियमानुसार अपने निकट संबंधियों से चात्रिण धर्म स्वीकार करने की अनुमति प्राप्त कर (भाद्र सु० ५) साम्प्रतिक क्षमत्-
 चामणा के माङ्गलिक पर्व के दिन गुरुभी के पास आपने
 दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा का महोत्सव उपर्युक्त गोलछा परिवार
 ने किया । मुनिवर्य राजसागरजी ने प्रवक्ष्या ग्रहण कराते हुए
 आपको मुनि भी ऋद्धिसागर का शिष्य व दीक्षा नाम
 सुखसागर घोषित किया ।

साध्वाचार की समुचित शिक्षा के अनंतर मार्गशीर्ष मास
 में आपकी बड़ी दीक्षा भी हो गई । अब आप जैन सिद्धान्त
 के विशेष अध्ययन में संलग्न हो गये और थोड़े समय में ही
 जेनागमों में दक्षता प्राप्त करली ।

आगम वाचना के समय शास्त्रोक्त साधु जीवन से अपने
 वर्तमान जीवन की तुलना करने पर शिथिलता नजर आई
 अतः साध्वाचार की ही सप होने से आपने मुनि पद्मसागरजी
 व गुणवन्तसागरजी के साथ गुरुभी से अलग हो कर
 सं० १६१८ सिरोही में क्रिया उद्धार कर लिया । तदनन्तर सुविहित
 मार्ग का प्रचार व तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते
 हुए सर्वत्र विहार करने लगे । अनुक्रम से तीर्थाधिराज शत्रुंजय
 की यात्रा कर के आप फलोधी पधारे ।

इधर साध्वीजी रूपभीजी की शिष्या उद्योतभीजी
 शिथिलाचार से सम्बन्ध विच्छेद कर सं० १६२२ में फलोधी
 आई और आपको योग्य सुविहित गुरु जान कर आप से
 वासन्तेप लेकर आशानुवर्तिनी हो गई । सं० १६२४ में लक्ष्मी
 आई दीक्षित होकर उनकी लक्ष्मीभीजी के नाम से शिष्या
 हो गई । सं० १६२६ में भगवानदास भावक ने गुरुभी से
 दीक्षा ग्रहण की और भगवानसागरजी के नाम से वे प्रसिद्ध हुवे ।

मुनि पद्मसागरजी कञ्जोपी पधारने मे पूर्ण ही अलग हो चुके थे अतः ३ साधु और ३ गायत्री का मनुदाय हुआ। एक बार आपने अपने में मनोदर घटिका में बगड़ों में कुछ सह गायो को विपरने हुए वैशो त्रिगुण फल अथवा आपने भविष्य में साधु मनुदाय का विचार होना बताया। और आपही यह भविष्यवाणी पूर्ण रूप से सांग मिये हुई। जैनागमों के निरन्तर अध्ययन से आपके ज्ञान की वृद्धि हुई और जनसाधारण के सुबोध के लिये आपने जीवातीव-राशिपद्धत (१६१० में गैलाने से प्रकाशित), भाषा कृतमूल, १०० वीत, ६२ मार्गगायंत्र, वराह, सनह, अष्टक पर कई अर्थ बोल-पाल के ग्रन्थों की रचना की।

इस प्रकार सुरिदित मार्ग का पुनरोद्धार कर धर्मव्यार करते हुये ३६ वर्ष ४ महीने १४ दिन का निर्मल संयम पावन हर सं० १६५२ के माघ बर्दा ५ शनिवार के प्रातःकाल कञ्जोपी में अनरान द्वारा ध्यान पूर्णक आप स्वर्ग निधारे।

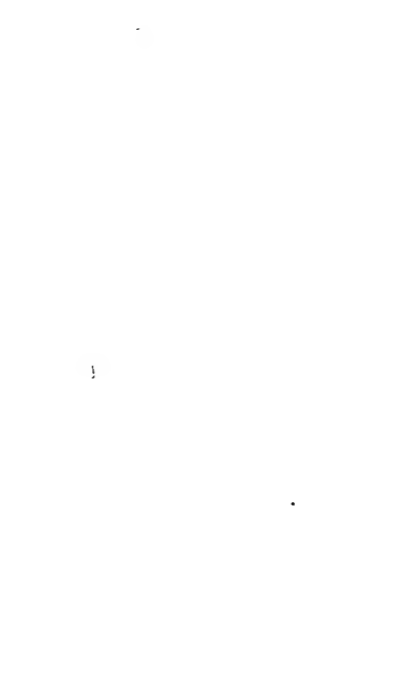
आप बड़े पुण्यशाली महापुरुष थे। यद्यपि आपही विग-मानना में ५ साधु व १४ साधियों का मनुदाय ही हुआ पर यह क्रमशः वृद्धि को प्राप्त हुआ और थोड़े समय के अन्त ही साधियों की संख्या २०० के लगभग पहुँच गई।

दोसरी शरी के गवररागट्टीय विद्वान् प्रन्थकर व क्रि-पात्र योगिराज विद्वानंदजी ने शिवजीगम से अलग होके पूज्य सुवसागरजी महाराज से अजमेर में उपास्थापना दीष्ट प्रदण का थी इससे उस समय आपके विद्युद्ध चारित्र की ख्याति कितनी अधिक थी इसका भोजी भाँति परिचय मिलता है। ऐसे महापुरुष जैन संप में अविच्छादिक अवतरित। यही हार्दिक अभिलाषा है।

अगरचन्द नाहटा।

स्तवन सूची

		पृष्ठ
१	तीर्थंकर श्री फेवलक्षणी जिन स्तवन	२
२.	श्री निवांणी प्रभु स्तवन	१२
३.	श्री सागर प्रभु जिन स्तवन...	२१
४.	श्री महाजम्ब जिन स्तवन	३१
५.	श्री विमल जिन स्तवन	३७
६.	श्री सर्वांनुभूति जिन स्तवन...	४६
७.	श्री श्रीधर जिन स्तवन	५७
८.	श्री इत्तप्रभु स्तवन	६२
९.	श्री दामोदर जिन स्तवन	७१
१०.	श्री सुतेज जिन स्तवन	७६
११.	श्री स्वामी प्रभु जिन स्तवन...	८६
१२.	श्री मुनि सुप्रसन्न जिन स्तवन...	९६
१३.	श्री सुमति जिन स्तवन	१०२
१४.	श्री शिष्यगति जिन स्तवन	१११
१५.	श्री आस्तारा जिन स्तवन	११८
१६.	श्री नमीश्वर स्वामी जिन स्तवन	१२३
१७.	श्री अनील जिन स्तवन	१३०



॥ ॐ परमगुरुस्त्वो नमः ॥

॥ महोपाध्याय देवचंद्रजी कृत
श्रुतीत स्तवन चौबीशी बालावबोध ॥

~~~~~

॥ दोहरा ॥

जिन गुण कीर्तन करि करो,  
आत्म कीर्ति अनंत ॥

शुद्धात्मता ध्यायतां,  
सह निज पद सुमहंत ॥ १ ॥

अतीत समयमां जे हुवा,  
तीर्थपती यांवीरा ॥

सस गुण स्तयि भविजन सहो,  
सहजात्म सुजगोथ ॥ २ ॥

शुद्ध ध्येव ध्यातां रहै,  
गर्म शुक्ल शुभ ध्यान ॥

परमात्मन ततो गमे,  
भवति निज निद्रि विधान ॥ ३ ॥  
विद्यन ह्यन्य भंगन करण,

जग अतिगण चणभोज ॥  
तम पद सेयी भवि र्हो,  
गभं मत्र निज दोग ॥ ४ ॥  
अस्तव आगम भंगरा,

आगम शीर्ष अनेन ।  
सदज स्वतंत्र पयान विण,  
प्रगटे जांनि अर्थांग ॥ ५ ॥  
॥ अथ प्रथम तीर्थकर श्री कैवलज्ञानी

जिन स्तवन ॥

नामे गाजे परम आल्हाद, प्रगटे अनुभव  
रस आम्वाद् । तेथी थाये मनि सुप्रसाद,  
सुणतां भाजेरे काई विषय विपादरे ॥ जिणंदा  
नाहरा नामथी मन भीने ॥ १ ॥

अर्थ:- जेना नामथी भयि जीवोना हृदयमां  
परम आल्हाद गाजी र्हें छै, प्रणे सुवनना जीवो

सिद्ध समान पोतानुं शुद्ध स्वरूप अणजाणता  
सडण, पडण, विध्वंसण यर्मा अपवित्र देहमा  
११ पोतापणुं जाणी मानो जन्म, जरा, मरणादि आधि  
व्याधि अहंपणे भोगदता अने मिथ्यात्व, अचिरति,  
प्रमाद, कषाय वशे कर्मबंध करताने प्रभुजी सिद्ध समान  
निर्मल ज्ञान दर्शन चरण चारित्र्य वीर्यमय स्वतंत्र  
अजर अमर अक्षय अनंत आनंदमय शुद्धात्म स्वरूप  
यगावे, तेज आत्म अनात्म लक्षण भिन्न सन-  
जना, रूपा प्रतीत धतां, भविर्जाचोना हृदयमां  
परमानंद प्राप्ति थाय छे वली रागादि दोषां मदी  
निर्मल शाश्वत ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि पोतानी  
अनंत शुद्ध शक्तिनो अनुभव आस्वाद स्वतंत्र पणे  
प्रगटे छे एज परम आल्हाद गाजे छे. ताहरां  
वचन सांभलतां विषय अने कषायोनो विषाद ताप  
दूर भागे अने प्रशमनानो आनंद आवे. अमीआरमा  
चारमा अने तेरमा गुणस्थानवासी सामान्य जिनोमां  
ईंद्र सरत्वा शासन नायक तमारा नामथी माहर्ल  
मन आक्षर्य पासे छे, माहर्ल मन प्रभुना स्याटादा-  
मृत वचन रसे भीतुं छे ॥ १ ॥



योग धाय, ए आदि द्रव्य गुण वर्गांग धार सात  
 मर्यादा छोटे नहीं तेने प्रमेय कलीए, एत रात  
 प्रमेयनुं प्रमाण करनार प्रभुजीनुं प्रधान केवलयानी एतुं नाम धे,  
 धे. तेभाज प्रभुजी तमासं केवलनाणी एतुं नाम धे,  
 जेने प्रधान छुनिओ रुदा मन घटन वादाना जाओ  
 धिर राणी ध्यान्मां ध्याय धे एटले तमास जट्ट  
 गुणो धार धार संभाली ध्यानाधिधनी तुमसगा  
 गुणो आत्म भगमां अभेदरणे ध्याइं समंयी  
 काष्टने प्रजाले धे ॥ ३ ॥

धुव परिणति छुनि जाम, परिणति पाणिमे  
 त्रिक राश ॥ करता पद प्रवृत्ति प्रकाश,  
 अस्ति नास्तिरे कांई सर्वनो भासरे ॥ जि० ॥ २॥

अर्थ:-ते केवलज्ञानी  
 तीर्थकरने धुव परिणति -  
 उत्पादु व्यय धुव ए  
 परिणमे धे एटले  
 उत्तर पर्यायनो उ  
 सर्वे द्रव्यमां ह  
 व्यय धुवना  
 या करे न

“अर्थ क्रिया कारित्वं द्रव्यं तथा उत्पाद्  
 व्यय भुव युक्तं सत् लक्षणं द्रव्यं” एटले द्रव्य  
 आप थापणुं कार्य करवानी क्रिया एटले पर्याय  
 प्रवृत्ति न करे तो द्रव्यत्वे द्रव्यत्वपणु ग्हे नहीं अने  
 सर्व समय उत्पाद् व्यय न होय तो द्रव्यत्वं सत्  
 लक्षण पण रहें नहीं माटे उत्पाद् व्यय भुवपणुं सर्व  
 समय मानहुं, तेथी प्रभुजी पोताना शुद्धात्म पदनी  
 प्रवृत्तिना प्रकाश करवायाला छे चली सर्व द्रव्य  
 पोत पोताना द्रव्य क्षेत्र काल अने भावपणे सदा  
 अस्ति एटले छता छे अने परद्रव्यना द्रव्यादिक  
 पणे कोई द्रव्य भाव नहीं, पर द्रव्यादिक रूपे न  
 धरुं एवो स्वभाव पण पोताना अस्तिपणे रत्तो छे  
 तेज नस्ति स्वभाव कहीण. एम अस्ति नास्ति  
 आदि वस्तुना अनंत स्वभाव समकाल सर्व समय  
 तमारी ज्ञायकतामां भ.से छे ॥४॥

सामान्य स्वभावना बोध, केवल दर्शन  
 शोध ॥ सहकार अभावे रोध, समयंतर रे  
 कोई बोध प्रबोधरे ॥ जि० ॥ ५ ॥



(१) वृत्ताकारक-ते ज्ञान कार्यनो वृत्ता पोते  
आत्मा.

(२) कार्यकारक-स्वपरं स्वरूप त्रिकाल भाषणं  
जाणुं ते ज्ञान कार्य.

(३) कारणकारक-ज्ञान कार्यनं उपादान कारण  
असंख्य प्रदेशो रक्षेत्ता ज्ञानना  
अनंता इति पर्याय. अने ज्ञान  
कार्यनं निमित्त ज्ञेय.

(४) संपदानकारक-छति पर्याय सामर्थ्यपणे  
प्रवर्तावी पोतेज पोताने  
अनंत बोधनं दान आपे ते  
स्वसंपदा देवा रूप संपदान.

(५) अपादानकारक-तेज छति पर्यायो साम-  
र्थ्यपणे प्रवर्तावी अपोधनो  
नाश करवा ते अपादान.

(६) अधिकरणकारक-स्वआत्मप्रदेशमास्वकाल  
प्रवृत्ति ते अधिकरण.

एवम अनंत गुणोना अनंत कारकचक्र ज्ञानाश्रित  
समकाले प्रवर्त्ते छे तेथी अनंत गुणोना धर्म एक रीते  
रथो पटला परम भाषने संसर्गे सर्वे गुणो प्रवर्त्ते ॥६॥

अर्थः—सर्वे द्रव्यना अग्निन्व वस्तुत्व आदि  
 सामान्य स्वभावतुं जायतुं तेने दर्शन गुण कहीए.  
 ते दर्शन गुण नमारे परम द्रगट गुठ धयो छे.  
 सामान्यपणे चन्तुनी धनी जाणवामां ई त्रिघां तथा  
 चंद्रसूर्यादिना सहायजाईनी नथी अने अरोधवेहनी  
 ते दर्शन गुण रूपी अरूपी अनंत द्रव्य जाणवामां  
 कोई टेकाणे शंकातो रूंचातो नथी एटले अमलिन  
 वैयलदर्शन गुण द्रगट धयो छे एटले सामान्य विशेष  
 पोथ समयांतरे धयो छे एण अग्वंड समय केवल  
 शान अने वैयलदर्शन उपयोग यत्तो छे ॥ ५ ॥

कारक चक्र समग, ते ज्ञायक भाव विलग  
 ॥ परमभाव संसग, एक रातेरे काई धयो  
 गुण चगारे ॥ जि० ॥ ६ ॥

अर्थः—जीयमां अनंता गुणो छे, ते सर्वे समय  
 अनंत कार्य करे छे, ते दरे  
 भिन्न भिन्न छे, ते सर्वे  
 संबंधेयलगोलां छे.  
 सर्वे आत्म कार्यानां

(१) कर्ता कारक-ते ज्ञानं कार्यनो कर्ता पोते  
आत्मा.

(२) कार्य कारक-स्वपरं स्वरूपं त्रिकालं भावयितुं  
जाणयितुं ते ज्ञानं कार्यं.

(३) कारण कारक-ज्ञानं कार्यनं उपादानं कारणं  
असंख्यं प्रदेशो रक्षेत्ता ज्ञानना  
अनन्ता इति पर्याय. अने ज्ञान  
कार्यनं निमित्तं ज्ञेय.

(४) संपदान कारक-छति पर्यायं सामर्थ्यपणे  
प्रवर्तनी पोतेज पोताने  
अनंत बोधनं दानं आपे ते  
स्यसंपदा देवां रूपं संपदान.

(५) अपादान कारक-तेज छति पर्यायो सामं-  
र्थ्यपणे प्रवर्तनी अयोधनी  
नाश करवा ते अपादान.

(६) अधिकरण कारक-स्य आत्मप्रदेशमा स्वकालं  
प्रवृत्तिं ते अधिकरण.

एवं अनंत गुणोना अनंत कारकचक्रं ज्ञानाश्रित  
समकाले प्रवर्त्ते छे तेभी अनंत गुणोना वर्ग एक रीते  
थयो पटलो परम भाषने संसर्गे सर्वे गुणो प्रवर्त्ते. ॥६॥



मलिन अने परतंत्र करे छे. एम पोताना अनंत  
 गुणो परसंगे चलमलिन करी संसार-त्रमण करता  
 दुःख पाये छे एण ज्यारे, जीव प्रभ आलंघनी थाय  
 एयारे सकल कारक शुद्ध स्वभाव धर्ममां प्रवर्त्ताबी  
 सकल दुःखधी निवृत्ति परमानंद प्रगट करे छे एम  
 पुरो जेमां माप नहीं एहवां अत्यंतिक आनंद प्रगट  
 थये छे एटले आत्म उपद्रव रहित परम निर्वाण  
 पदनी जरूर स्वामी थाय छे ॥७॥

दास विभाग अपाय-नासे प्रभु सुपसाय ॥  
 जे तन्मयताए ध्याय सही ते हनेरे- देवचंद्र  
 पद थायरे जि० ॥८॥

अर्थ:—हूँ प्रभुनां दास ते प्रभुनां आलंघने  
 नधी-धर्मो-रूपांतुषी-परद्रवनी-ममता आदि  
 विभाव अनेक प्रकार नुं दुःख देखे-ते प्रभु आलंघने  
 सकल विभाव दुःख दोषनाश थाय माटे प्रभुनोज  
 पसाय जाण यो, प्रभुने तन्म-यसाय के, प्रभु जेम-  
 राग द्वेष आदि तजी शुद्ध स्वभावावरणमां धिर  
 थया तेमजे भविरागादि विभाव छोड़ी-इ जानंद  
 स्वभावमां धिर धर एटले तन्मय ते



इम सालंबन जिन ध्यान, भविसाधे तत्  
विधान ॥ लहे पूर्णानंद अमान, तेहरी यां  
काई शीव ईगानरे जि० ॥७॥

अर्थ:—एम प्रमुना अचलंपने जे भवि.  
ध्यान-राज्या तत्त्वविधान साधेपटले प्रमुजाण  
गुणोमां कारक शक्रां पोतानाजं कार्यमां प्रवर्त्ता  
पूर्ण आत्ममिद्धि करी तेम साहरे पण आत्ममि  
रूप कार्यकरवुं अगर एजप्रमाणो आत्ममिद्धि  
सादे प्रमुजाण. कलु नो साहरे सर्वगुणो निज  
शुद्ध कार्यमां प्रवर्त्तावया एज प्रमुनुं आलंपन  
णवुं. प्रमुं आलंपन विना अनादि अविद्या यं  
गत द्रव्य गुणयो यमां कार्यमानां ज्ञान गुण  
प्रवर्त्ताये छे एटले पुद्गल कार्यमां रोकें छे,  
अवराय छे, पण शुद्धात्मे. उपयोगमां प्रवर्त्ताव  
नथी, तेमज दर्शन गुणपण पुद्गली ह. कार्यमां  
वी शुभाशुभ अनुद्ध निश्चयमां रोकें ॥ ते  
धरणगुण पण पुद्गलना अनंत गुणोमां (विषयो  
प्रवर्त्ताये छे कपायोमां मुक्ताय छे (मोह पाने  
धैर्यगुण पण पुद्गलना गुणयोयोमां कोरवी

मलिन अने परतंत्र करे छे: एम पोताना अनंत गुणो परसंगे चलमलिन करी संसार अमण करता दुःख पामे छे एण ज्यारे-जीव प्रभ आलंबनी धाय यारे सकल कारक शुद्धे स्वभाव धर्ममा प्रवर्तनी सकल दुःखधी निवृत्ति परमानंद प्रगट करे छे एम जेना माप नहीं एहयो अर्थतीक आनंद प्रगट थये छे एटले आत्म उपद्रव रहित परम निर्वाण पदनी जरूर स्वामी धाय छे ॥७॥ ।

दास विभाग अपाय-नासे प्रभु सुपसाय ॥  
जे तन्मयताए ध्याय सही ते हनेरे-देषचंद्र  
पद धायरे जि० ॥८॥

अर्थ:—हुँ प्रभुनों दास ते प्रभुना आलंबने नधी-धर्यो र्यासुधी परद्रवनी ममता आदि विभाव अनेक प्रकार हुँ दुःख देखे ते प्रभु आलंबने सकल विभाव दुःख दोषनाश धाय माटे प्रभुनोज पसाय जाण यो प्रभुने तन्मयताए के प्रभु जेम-रांग द्वेष आदि तजी शुद्ध स्वभावाचरणमा धिर धया तेमजे भविरागादि विभाव छोड़ी सह जानंद स्वभावमा धिर थइ एटले तन्मय थइ ध्याय ते

जस्वर महान् वैशो मां भक्त्या समाप्तं शुद्धं भिन्द ॥  
 वामे ॥२॥ आंकणी ॥

॥ अथ द्वितीय श्री निर्गोणी प्रभुनुं स्तवन ॥

वीरजी प्याराहो वीरजी प्यारा ॥ ए राग ॥

प्रणमुं चरण परमगुरु जिनना, हंस तो मुनि  
 जन मनना ॥ यासी अनुभव नंदन वनना,  
 भोगी आनंद घनना ॥१॥ भोग श्यामी हो  
 तोरो प्यान धरीजे, प्यान धरीजे हो सिद्धि  
 धरीजे, अनुभव अमृत पीजे । भोग श्यामी  
 हो तोरो ० ॥ ए आंकणी ॥

अर्थ:-घनघाती रूप कर्म शयुनं जीत्या अने  
 केवलज्ञानादि चार अनंतां जेणे प्रगट करी एवढ्या  
 प्रभु अतित शोधार्थाना वीरजा तीर्थका  
 चरणकमलने अंगर शुद्ध स्वभावाचा  
 बहु सन्माने प्रणमुं हूं. जेणे मुनिजनो पोतना  
 मानसरोवरमां हंस रूपे रमाये छे. हंस  
 पाणी भिन्न करी दूध पीए छे तेम प्रभु

अनात्म भावना लक्षण भिन्न जाणी दर्शावी मुनि-  
 भोने पण अनात्म लक्षणोनी आदर तजावी शुद्धा-  
 त्म लक्षणमय शुद्धात्म ल. द्धनो अनुभव करावे  
 हे, चली प्रभु आत्मानो अनंत शुद्ध शक्तिरूप नंद-  
 नवनर्मा वसे हे, अनंत गुणोनी सुपासनामां मग  
 तृप्त धई रक्षा हे, एम अनंत स्वगुण आनंद सम-  
 काले भोगवे हे तेथी आनंदघन भोगी एह्या  
 माहारा नाथ विभाविक दुःखधी घोटावनार अने  
 परम निधृति स्थानक आनंदपुरीमां (शिव नगरीमां)  
 निरघाण पद (निश्चल पद) ना दातार तमारुंज  
 ध्यान घरीए, जगघासी जीव मुहुगल घ्याने, अ-  
 शुद्ध अध्वसाये, अशुद्ध ऐश्याए, अशुद्ध वेष्टाए  
 विभावर्मा प्रीति करवे ज्ञानावरणादि कर्म बांधी  
 दोन दुःखी परतंत्र धई रक्षा हे ते. देखी हूं भव-  
 भयधी उद्दिप्त पयो प्रभुंज घ्यान करु एटले प्रभुनी  
 आणा समय मात्र पण चूकू नहीं. ए जिज्ञासा हे.  
 तमारुंज घ्यान घरीए तो सिद्धि वरीए माटे शुद्धा-  
 त्म गुणमां उपयोग धिर राखवा अने धिरता, वधा-  
 रथा रूप अनुभव अमृत पीए ॥ १ ॥



ज्ञापक रूप छे पुदगलो पेठे बर्णादि वीश गुण रूपे  
अथवा ते माहिला कोई रूपे पण नथी तेथी कल्याण  
कारी, निराकार अवगाहना छे. अवगाहना तो  
आकाश प्रदेशने रोके तेमे कहीए. प्रमुनी अवगाहना  
व्यवहारथी आकाश प्रदेशमां कहेवाय पण निश्च-  
यथी तो प्रभु स्वक्षेत्री छे परक्षेत्री नथी. जे प्रदेशमां  
सिद्धनी अवगाहना छे तेज प्रदेशमां अजीव पुद-  
गल खंडो तथा निगोद राशी शरीर विगेरे अनेक  
द्रव्यो छे पण सिद्धनी अवगाहनाथी ते क्षेत्र रोकातुं  
नथी पण व्यवहार नयथी व्यवहार द्रष्टिने सम-  
जवा बदले अवगाहना कही पण परमनये जीव  
अनअवगाही छे, "उक्तं च अचारांगे पांचमा अध्या-  
यने उद्देश्ये षडे कर्तुं छे:—से न दोह, न हस्ते, न  
घटे, न तंसे, न चउरसे, न परिमंडले, न किणहे, न  
नीले, न लोहिण, न हालिह, न सुकिल्ले, न सुरभि  
गंधे, न दुरभि गंधे, न तिस्ते, न कहुवे, न कपाये,  
न आंघिले, न महुरे, न करकडे, न मउए, न गुरूप,  
न लहूप, न सीए, न उणहे, न निन्हे, न लुपले, न  
काऊ, न रुहे, न संग, न ईधिय, न पुरिसे, न अन्न-  
हा परिन्ने, सत्तेउवमा निचिमश्ये, अरुचि संत्ता



मि अनन्ता अने तेथी अणभिलाप्य घर्मे अनंतगुणा  
गणा ॥ ३ ॥

इति अविभागी पर्यय व्यक्ते, कारज शक्ति  
वित्तें ॥ ते विशेष सामर्थ्य प्रशक्ते, गुण परि-  
णाम अभिव्यक्ते ॥ मोरा० ॥ ४

अर्थ:-ब्रह्मना प्रत्येक प्रदेशे इति पर्याय अनन्ता  
ते एक एक पर्याय अविभागी छे एटले ते पर्या-  
यो कोई प्रकारे विभाग थई शके नहि. ते पर्यायो  
अर्थ सन्मुख प्रवर्तयाथी सामर्थ्यवणे धाय तेथी  
अर्थ करवानी शक्ति प्रवर्तें ते विशेष स्वभाव  
हिए. ते विशेष गुणोनुं सामर्थ्यवणुं भिन्न भिन्न  
क्तिवाळुं छे पण जे जे गुणो जे जे परिणाम ते  
गुण सन्मुख प्रवर्तें प्रगट थाय ॥ ४ ॥

निर्वाणी प्रभु शुद्ध स्वभावी, अभय निरा-  
पवावी ॥ स्याद्वादी यम नीगत रावी, पूरण  
शक्ति प्रभावी ॥ मोरा० ॥ ५ ॥

अर्थ:-निश्चल पदने पाभ्या एवा निर्वाणी  
तुना विशेष स्वभाव पूर्ण शुद्ध यथा छे तेथी ते





उत्तर पर्यायनी उत्पादु सर्वे समय तथा करे  
 ते पर्यायो सर्वे समय छति रूप कायम होय  
 हे इहां धुच गवेस्था छे. एया निमल गुणोभां  
 प्रभु एकांतिक अस्पंतिक आनंद भोगवे छे एम  
 अनंत आनंदमा विश्राम लीघो छे. प्रभु सर्वे संसा-  
 नी जीवोना खेदज्ञ छो पटले सर्वे जीवो सत्ताए  
 सिद्ध समान छे तोपण अनादि अविद्याए पोतानी  
 आत्मशुद्धता अणजाणता देहादि अधिर अने पर-  
 तंत्र पुद्गल पर्यायनी ममताए जन्म जरा मरण  
 रोग शोक कषाय अज्ञान मिथ्यास्थादिके फलेशित  
 परतंत्रता यशे क्षण मात्र पण विराम पामता नथी  
 एया खेदयुक्त जीवोने देवी प्रभु तेमनो खेद टालवा  
 माटे शुद्ध नये शुद्ध स्वरूप दर्शाया आठे कमेजन्ध  
 दुःखधी मुकाया अर्थ भव्योने मोक्षमार्गमां प्रेरे  
 प्रेराषे छे तेधी खेदज्ञ छे. निश्चय नपथी प्रभु कोई  
 अन्य द्रव्यना स्पामी नथी पण सुस्वामी पटले पो-  
 ताना ज्ञानादि अनंतगुण पर्यायना स्वामी छे. व्यद-  
 हार नपथी पोतानी आज्ञा पालक सेवकोने चार  
 गति भ्रमखथी छोडावे अने ज्ञानदर्शन चरण अन-  
 तवीर्य अद्यापाधादि स्वतंत्र सुख आपे माटे

निश्चय छे. संसारी जीयो चार गतिमां आउग्यानी स्थिति सुधी रहे छे अने मरणांते अन्य स्थानके जाय छे पण प्रभुने तां सिद्ध क्षेत्र छोडी अन्य स्थानके जायुं पढ़नुं नथी तेथी आयुष्मने तावे नथी पण सादि अनंत स्थिती छे. सकल पाप दोष रहित परम पवित्र छे. निश्चय स्याद्वाद मत्ताना भोगी छे. पोतानी अनंत पर्यायप्रवृत्ति आसमां राज्य करता राजी छे. सर्वे शक्ति निराकरण कई तेथी पूर्ण शक्ति प्रभावयंत छे ॥ ५ ॥

अचल अखंड स्वगुण अरामी, अनंता-  
नंद विसरामी ॥ सकल जीव खेदज्ञ सुस्वामी,  
निरामगंधी आकामी ॥ मोरा० ॥ ६ ॥

अर्थ:-प्रभुना अनंत गुणो चलाचल रहित थया, भाव धीर्य पूर्ण गुणोमां अचल अक्षय प्रवर्त्युं तेथी कोइ गुण के कोइ पर्याय खंडाय घसाय नहीं, सर्वे गुणोना पर्यायनो अखंड प्रवाह बहे तेथी गुणो के पर्यायो व्यय पामे नहीं एटले सर्वे समय गुणो अने पर्यायो कायम रहे पण विणशे खूटे नहीं मात्र आधीर्भाव तिरोभाव थया करे. पूर्ण पर्यायनो व्यय

अने उत्तर पर्यायनो उत्पादु सर्वे समय थया कर  
 पण ते पर्यायो सर्वे समय छति रुप कायम होय  
 माटे इहां धुव गवेख्या छे. एथा निमल गुणोमां  
 प्रभु एकांतिक अत्यंतिक आनंद भोगवे छे एम  
 अनंत आनंदमां विश्राम लीघो छे. प्रभु सर्वे संसा-  
 री जीवोना खेदज्ञ घो एटले सर्वे जीवो सत्ताए  
 सिद्ध समान छे तोपण अनादि अविद्याए पोतानी  
 आत्मशुद्धता अणजाणता देहादि अधिर अने पर-  
 तंत्र पुद्गल पर्यायनी ममताए जन्म जरा मरण  
 रोग शोग कपाप अज्ञान मिथ्यात्वादिके क्लेशित  
 परतंत्रता घरी क्षण मात्र पण चिराम वायस्त नधी  
 एथा खेदयुक्त जीवोने देखी प्रभु तेमनो खेद टालवा  
 माटे शुद्ध नये शुद्ध स्वरुप दर्शावी थाठे कमेजन्म  
 दुःखधी मुकावा अर्थ भव्योने मोक्षमार्गमां प्रेरे  
 मेरावे छे तेधी खेदज्ञ छे. निश्चय नपधी प्रभु कोई  
 अन्य द्रव्यना स्वामी नधी पण सुस्वामी एटले पो-  
 ताना ज्ञानादि अनंतगुण पर्यायना स्वामी छे. व्यध-  
 हार नपधी पोतानी आज्ञा पालक सेवकोने चार  
 गति भ्रमणधी छोटावे अने ज्ञानदर्शन चरण अनं-  
 तवीर्य अन्यायाद्यादि स्वतंत्र सुख आपे माटे

सुस्वामी के० रुडा स्वामी छे. अशुची पुद्गलनी गंध रहित अने कोई पण अन्य घस्तुना कामी नथी. कामना तो अधुराने होय अने परमेश्वर तो परम गुणी पूर्णानंदीने कोई प्रकारनी कामना रहि नथी ॥६॥

निःसंगी सेवनथी प्रगटे, पूर्णानंदी ईहा ॥  
साधन शक्ते गुण एकत्वे, सीधे साध्य स-  
मीहा ॥ मृ.प० ॥ ७ ॥

अर्थः—एह्या निःसंगी के० सकल परद्रव्य संग रहित सहज स्वभाषानंदी वसुना द्रव्य भाष सेवा करनारने पूर्णानंद करवावाली शुद्ध तत्त्वरुची प्रगट थाय. ते तत्त्वरुची उपनेथी आत्मज्ञानि धीर्य प्रगट भई पूर्णानंद प्रगट थाय. साधन शक्तिवडे परिणति सुणथी अनेद करे एटले परपरिणति त्यागी साध्य सिद्ध करवाना जे इच्छा हतो ते पूर्ण साध्य सिद्ध करे एटले सिद्धता वामे ॥ ७ ॥

पुष्ट निमित्तालंबन ध्याने, सालंबन लय  
ठाने ॥ देवचंद्र गुणने एक ताने, पहोचे पू-  
रण याने ॥ मोगा० ॥ ८ ॥

अर्थ:- प्रभुजी तमें मोक्षाभिलाषीने पुष्ट आलं-  
 चन छो एटले जेम प्रभुए ज्ञानदर्शन चरण चीर्पादि  
 आत्मगुणां पुद्गलीक कार्यमांथी पाछा घाली सह-  
 ज.त्म कार्यमां जोड्या अने भव्य जीवोने सर्वे शक्ति  
 महजात्मकार्यमां प्रयुंजघी दर्शावीए यत्रे प्रकारे प्र-  
 भुनुं आलंचन लेई जे वत्ते ते आत्वर निरालंचता-  
 पामे एटले ते जीवने कोई समय पण पुद्गलीक  
 आलंचन हेतुं पडे नहीं, पर आलंचन लय धाय,  
 चारनिकायना देवोमां चंद्रमा समान निर्वाणी प्रभु-  
 ना ध्यस्त ज्ञानादि शुद्ध गुणोमां एकतापणे उपयोग  
 आवेइ करे एटले शुद्ध गुणीना गुण बहु माने पूर्णा-  
 नंद स्थानके पहोचे ॥ ८ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ श्री तृतीय सागर प्रभु जिन स्तवन ॥

॥ चउमासी पारणु आवे ॥.५ राग ॥

गुण आगर सागर स्वामी, मुनि भाव  
 जिवन निःकामी ॥ गुण करणे कर्तृ प्रयोगी,

प्राग्भावी सत्ता भोगी ॥ १ ॥ सुहंकर भव्य  
 ए जिन गावो, जिम पूरण पदवी पावो ॥  
 ॥ सुहंकर० ॥ ए आकर्णा ॥

अर्थः-श्री सागर स्वामी ज्ञान दर्शन धीर्यादि  
 अनंत उत्तम गुणोना आगर के० निधान हे, मुनि-  
 नुं मुनिपणुं कायम राम्यया वृनिथोना भाव जीयन  
 छे अने मुनि लोकोने शुद्धात्म तत्वमां चिदोपे वि-  
 श्राम आपवायाला छे वली सागर स्वामी सकल  
 परद्रव्यनी कामना रहित छे, ज्ञान दर्शनादि स्वभा-  
 यिक अनंत कार्य सकल समय सहज स्वभावे कर  
 छे अने ते कार्यगुण प्रगटपणे धर्या ते ज्ञान दर्शन  
 धरण धीर्यादि अनंत कार्यगुण समुदायना समकाले  
 अनंत आनंद भोगी छे. आत्माना प्रति प्रदेशमां  
 निज कार्य करवाना छति पर्यायो अनंता, देखवा  
 रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनंता, आचरण  
 रमण रूप कार्य करवाना छती पर्यायो अनंता, धीर्य  
 अचल राम्यया रूप कार्य करवाना छती पर्यायो  
 अनंता तेम ए आदि अनंत कार्य करवाना अनंत  
 गुणना छती पर्याय प्रति प्रदेशे अनंतानंता छे ते

छती पर्याय रूप गुण करण प्रयोग विना प्रयासे दर  
समय अनंत स्वस्वकार्य धर्या करे छे ते कार्यना व्य-  
क्ति अने शक्तिना पण भोगी छो. हे भवि जीषो !  
गुवा सुख करयाथाला परम समाधिना दातार जि-  
नेश्वरने सेषो-तेमना गुण गाथो जेथो पोताना सह-  
ज, पूर्ण परमानंद पदवी पामो ॥ १ ॥

सामान्य स्वभाव स्वपरना, द्रव्यादि चतु-  
ष्टय धरना ॥ देखे दरशन स्वनाये, निज वी-  
र्य अनंत सहाये ॥ सु० ॥ २ ॥

अर्थ:- अस्तित्वादि स्वपर द्रव्यना सामान्य  
स्वभावने अने द्रव्य क्षेत्र काल भाव गृह्ण निजा-  
रम स्वभावने निज अनंत धीर्य सहाय घटे दर्शन  
गुण करी सकल समय पूरण पदे देखो छो ॥ २ ॥

तेहने ते जाणे नाण, ए धर्म विशेष पहान ॥  
सांवय वीकारज शक्ते, अविभागी पर्यय  
व्यक्ते ॥ सु० ॥ ३ ॥

अर्थ:- एमज स्वपर सामान्य विशेष स्वभावने  
अने स्वपर द्रव्यादिकने विशेष प्रधान ज्ञान गुणो



ન.રીને પૂર્ણ પર્યાયે સકલ સમય જાણે છે। પટલે  
 ત્રિમૂલ વેષજ્ઞાન રૂપ છે। પ્રતિ પ્રદેશે સર્વે કાર્ય  
 કરવાના કારણવળે છત્રી પર્યાયે અનંતાનંત રજા  
 છે તે સાચવવું છે। એક સમય પ્રવર્તીમાં આર્યોર્માયે  
 વપર્જે અને તીરોભાવે વિચારે ઘણી ધીજા સમયે  
 આર્યોર્માયે થણા પર્યાયે આર્યોર્માયે રિણત્રી  
 તીરોભાવે જાય (ઉપજે) એમ દર સમયે જૂદાં જૂદાં  
 કાર્ય કરવાને માટે તેજ પર્યાયે આર્યોર્માયે તિરો-  
 ભાવે ઉપજ્યા વિચાર્યા કરે તેથી તે પર્યાયોને સાચ-  
 વવું પણ કહીયે અને સમય સમય જૂદાં કાર્ય કરે  
 તેને ધીકારજ શક્તિ કહીયે પણ તે સર્વે છત્રી પર્યા-  
 યો અધિભાગી છે અને કાર્ય પ્રયોજને પટલે ઉર્દ્ધતાપ  
 સામર્થ્યવળે આવે પણ તે સર્વે છત્રી પ્રજાવો સહા-  
 વળે સદા ધ્રુવ છે. નવે નવે સમયે જોયોની નયો નયો  
 વર્ષના થાય તે અનંતાનંતી વર્ષનાને જાણે માટે  
 જૂદા જૂદા કાર્યને જાણે તે ધીકારજ શક્તિ કહીયે  
 ધીજી રીતે સાચવવું છે। અધિભાગી મિત્ર મિત્ર  
 પર્યાય માટે આત્મ સંગના અવયવો પણ કહીયે ॥૩॥

जै कारण कारण भावे, वरते पर्याय प्र-  
भावे ॥ प्रति समय व्यय उत्पादि, ज्ञेयादिक  
अनुगत सादि ॥ सु० ॥ ४ ॥

अर्थ:-इती पर्यायो प्रथम तेने कारण कहिए  
अने कारण होय ते अथर्व कार्य करे अने पर्याय  
प्राप्ताना प्रभावे घेत्ते तेथी प्रति समय व्यय उत्पाद  
एटले कारणपणेथी कार्यपणे उपजे अने कार्य करी  
पाह्या कारण पणे उपजे तेथी दर समय व्यय उत्पा-  
द धया करे, अने नया नया ज्ञेयने जाणवाथी तेनी  
सादि पण कहिए. उक्तंच:-“परिगमनं पञ्जाओ”  
एटले पर्याय एक कार्य रूढी रीते करी योजा का-  
र्यमा जाय, एक कार्यपणे उपजेला त्यांथी विणसी  
बीजा कार्यपणे उपजे, तेमज दर समय पर्याय प्र-  
वाह जाणवो ॥ ४ ॥

अविभागी पर्याय जेह, समवायी कार्याना  
गेह ॥ जे नित्य त्रिकाली अनंत, तसु शायक  
ज्ञान (भाव) महंत ॥ सु० ॥ ५ ॥

अर्थ:-प्रति प्रेक्षो अनिभागी जे स्वर्गी पर्याप्त  
 रक्षा छे ते आत्माभी अमेदगणे समयाग संबंधे  
 अनादि संबंधे एण कदिए अने ते पर्याप्तने मने  
 समय कार्य समयाग एटले कार्य संबंध छे एटले  
 कार्यना धा छे. ते अनिभागी पर्याप्तो निष्ठा छे  
 त्रिकाक्षी छे, अमंड छे, सेमार्था एक पर्याप्त ए  
 कोई काल घटे नछे नहीं तेथी अभ्रग छे, स्वयंभू छे  
 अप्रयासे कार्यकारी छे एटले बिना प्रयासे ए  
 सहज स्वभाविक कार्य धर्या करे. तेमाना ज्ञान  
 अनंत पर्याप्तोमां परम जायक भाव रह्यो छे ते पर्याप्त  
 यो पड़े पोते पोताने अने अन्य द्रव्यना गुण पर्याप्त  
 योने जाणयानी महंत शक्ति रह्यो छे ते शक्ति प्र  
 जोने तो व्यक्त पणे धई तेथी ते ज्ञानादिक अनंत  
 गुणोना ज्ञाता भोक्ता छे ॥ ५ ॥

जे नित्य अनित्य स्वभाव, ते देखे दर्शन  
 भाव ॥ सामान्य विशेषनो पिंड, द्रव्यार्थिक  
 वस्तु प्रचंड ॥ सु० ॥ ६ ॥

अर्थ:-वस्तुता जे नित्यानित्य स्वभाव ते  
 प्रभुजी दर्शनभावे करी देखे छे तेथी प्रभु सामान्य

અને વિશેષ લક્ષણનાં વકત્ર્ય વિદ્યમાનમ દ્રવ્ય તે તે  
 દ્રવ્યવખે સદા ઘટીવતં છે અને પ્રખંડ કે० મહા-  
 વૌર્ધવંત (વલંવંત) વસ્તુ છે ॥ ૬ ॥

ईम केवल दर्शन नाण, सामान्यविशेषनो  
 भाण ॥ द्विगुण आत्म श्रद्धाण, चरणादिक त  
 व्ययसाए ॥ सु० ॥ ७ ॥

અર્થ:-એમ પ્રમુખી કેવલદર્શન અને કેવલજ્ઞ  
 વત ધો વટલે વસ્તુના સામાન્ય વિશેષ ભાવ પ્રવ  
 કરવાયાલા સૂર્ય ધો. ઉપયોગમયી આત્મા છે ૧  
 તે ઉપયોગ સામાન્ય વિશેષ છે પ્રકારે છે હવે  
 "ઉપયોગમયો અપ્વા, ઉપયોગો દુવિષ્ણવો" વા  
 આત્મા દર્શન જ્ઞાનમયી છે. અને જરણાદિક ૧  
 વ્યવસાય કે० જ્ઞાન ઉપયોગ અને દર્શન ઉપયોગ  
 ધિરતાવ રમણ તેનુંજ નામ વારિષ્ટ વહીવ જ  
 જ્ઞાન દર્શનના અનંત વર્ણવમાં ધિરતાવ ઉપવં  
 રમે તિહાં રાગાદિ વિભાવનાં અવકાશ વર્ધો ૧  
 વામ વૌતરાગતાવ શ્રદ્ધાત્મભાવમાં ધિરતા તેને  
 વારિષ્ટ વહીવ અને આદિ શબ્દે ઉપયોગમાં આ  
 વયં અને આત્મ શુભવર્ગવ અવાધિતવખે રહે ૧

अंध्याचाय गुण कहीण, उपयोगने फिर घडोर  
 अर्कप राखवाचाली निज शक्तिने अनल-अनं-  
 दीय कहिण, शुद्ध उपयोगमां गिर रहेलो आत्म  
 परम समाधि भोगचे छे माटे तेंने परम समाधि  
 कहिण, कोई प्रकारनो भय आवे नहीं घाटे निर्भय  
 कहिण चली कोई प्रकारे आकुरता आवे नहीं माटे  
 निराकुल कहिण. उपयोगमां अन्य प्रवृत्ति नथी  
 माटे परम निवृत्ति कहीण, शुद्धोपयोगवंतने परतंत्र-  
 ता नथी माटे परम स्वतंत्रता कहीण, शुद्धोपयोगी  
 आत्म गुणमांटे परम तृप्तिवंत छे माटे परम नय  
 कहीण, फिर उपयोगवंत स्वपरद्रव्य भाय वाणनी  
 हाणी करतो नथी तेथी परम क्षमा कहीण घडी  
 सर्व जीवोनी सत्ता समान जाणे छे कोईने हीण  
 अधिक जाणतो नथी माटे परममार्दव्य कहीण, अहीं  
 आं स्वपर जीवने घंचवुं ठगवुं नथी यक्रता नथी  
 माटे परम आर्षव्य कहीण, अहींआं परद्रव्यनी का-  
 मना इच्छा मूर्खा माहकता व्यावकता रक्षकता  
 स्पृहा नथी माटे परम मुक्ति कहिण एम सहज, शु-  
 द्धात्म अनंत गुणो उपयोगमांज भासु छे. ए प्रमा-  
 णे व्यघसाय के० ज्ञानदर्शन शुद्धोपयोग व्यापारमां

परिणादिकं अनंत गुणो आख्यां जाणवा ॥ ७ ॥

द्रव्य जेह विशेष परिणामी, ते कहीए पज्जव नामी ॥ छती सामर्थ्य दुभेदे, पर्याय विशेषानिवेदे ॥ सु० ॥ ८ ॥

अर्थ:-द्रव्य पोते सामान्य छतां विशेष परिणामी छे एटले एक द्रव्यमां अनंत स्वपर्याय अने अनंत स्वपर्यायमां एक द्रव्यपणुं माटे पर्यायनामी कहीए. उक्तंच:-" ॥ गुणाणामासऊ दब्बं, एक दब्बसिपा गुणा ॥ लक्षणं पज्जयासंतु, उभऊ निस्सिद्धिआ भवे" ॥ एटले अनंत पर्याय लक्षणवंत द्रव्य जाणवां. ते पर्यायो छती अने सामर्थ्य एम छे भेदे छे, छती पर्यायक्षेत्र विस्तारपणे सधे प्रदेशमां अनंतानता रक्षा छे अने ते वकाले सामर्थ्य पणे उर्द्धताए आर्या कार्य करे छे एटले तिर्पक् क्षेत्र विस्तारपणे जे रक्षा ते छती पर्याय कहीए अने स्वकाले उर्द्धताए आवी आप आपणुं कार्य करे ते सामर्थ्य पर्याय कहीए एम विशेष पर्यायने तिक्के हे० विशेष भोगवे छे ॥ ८ ॥

तसु रमणे भोगनो चंद्र, अप्रयासी पूर्णा-  
नंद ॥ प्रगटी जस शक्ति अनंती, निज कार-  
ज वृत्ति स्वतंती ॥ सु० ॥ ६ ॥

अर्थ:-ते अनंत स्वशुद्ध रम्य पर्यायमां रमण  
तेधी दरेक समय समकाले अनंतानंदनो भोग छे.  
अने ते पर्याय प्रयुंजचामां अने भोग भोगवषामां  
कोई प्रकारे कोई घलत पण प्रयास करयो पडतो  
नधी पण सहेजे पर्याय प्रवर्तें छे अने सहेजे भोग  
आनंद उपजे छे एषी जेने अनंती शक्ति स्वतं  
प्रगट र्थ छे. तेधी सकल गुणोनी थाप थाप्य  
कार्योनी प्रवर्ती सहज स्वभावे स्वतंत्रपणे धा  
छे ॥ ६ ॥

गुण द्रव्य सामान्य स्वभावी, तीर्थपतं  
त्यक्त विभावी ॥ प्रभु आणा भक्ते लीन  
तिणे देवचंद्र पद कीन ॥ सु० ॥ १० ॥

अर्थ:-प्रभु, गुणे अने द्रव्ये सामान्य स्वभावी  
छे, चतुर्विधि संघने तारवानो धार्ग स्थापन करवा-  
वासा तेधी तीर्थपती. जेणे सकल विभाव तज्यो

छे एम छतां पण उदय प्रभाषे भवि जीवोने देयना  
 आपी तारे छे पण तेनुं ममत्त्व करता नथी. जे जीव  
 प्रभुजीनी आणा सेयबामां लयलीन थयो तेणे देव-  
 मां चंद्रमा समान एवं पोतातुं सिद्धि पद प्रगट  
 कर्युं करे छे अने करशे । १० ॥

॥ अथ चतुर्थ श्री महाजस जिन स्तवन ॥

आत्म प्रदेश रंगधल अनुपम, सम्यक्-  
 दर्शन रंगरे, निज सुखके सधेया ॥ तुं तो  
 निज गुण खेल वसंतरे ॥ निज० ॥ पर परि-  
 णति चिंता तजी निजमें, ज्ञान सखाके  
 संगरे ॥ नि० ॥ १ ॥

अर्थ:-आत्माना असख्याता प्रदेशमां रहेली  
 ज्ञानदर्शन चरण वीर्यादि अनंत आत्म शक्ति ते  
 अनंत आनंद आपवावाली छे भाटे रंग स्थानक  
 तेनेज कहीए के ज्यां अनंत आनंद आवे. अने जे  
 विषयनो आनंद ते तो अधिर परतंत्र बहु रो



अने कर्मबंधनु कारण ते जेव्हा विनयगंगा नदी प्रवा-  
 नीने भोगमुक्ति आनंद मानुस पडे हे गगन अस्त्र  
 मत्तान्मिमां रहेलो आत्मिक आनंद तेने पृथ्वी  
 उपपरिम आनंदनो उपमा लागी शके नहीं एव  
 अनुपम निरुपरीत परम आनंद हे, गगन उपा  
 जीव मिथ्यास्य बुद्धि भ्रमेली विनयगंगा घासन  
 तजे अने सम्यक्दर्शन प्रगट पाव मोज तं आनंद  
 लई शके तो सम्यक्दर्शन करी राम आगे, मां  
 सम्यक्दर्शन महिम आत्म सिद्धि गुणना दाता  
 श्री महाजम जिनेश्वर महाजमवंतने आत्म सिद्धि  
 सुखना साधक भव्यजापो मेयो-ध्यायो, हे शाश्व  
 तसुख अभिलार्थी ! जेव्हा अनंत पर्यायनां याम हे  
 पृथ्वी आत्मगुण रुप समंतमां निरंतर लेलो, पु-  
 गल परिस्थिती कांई काले पण सुख होय नहीं  
 केमके ते अनंत धर्मार्थी निरजेली माटे विनयगंगा  
 क अने आपणी इच्छाए रहे नहीं, आपणी इच्छाए  
 वंत नहीं एम उतां पण मूढ जीव ए मांहे अमर्थ  
 सुख मानी उलटो प्रयास करी फोफट अम 'हे  
 भोगवे हे, एमां उमेद करवाथो नाउमेदपणुं पाप  
 ए मांहे सुखनी आशा राखवाथो निराशपणुं भा

माटे पर परिष्कृतिनी आशा तजी शुद्ध दर्शन ज्ञान  
 चरणमय निजात्म परिष्कृतिमां खेलो. परपरिष्कृतिनु  
 चिंतन ते फलेश मात्र छे माटे ते तजी ज्ञानमिष्ट  
 साथे अखंड स्वतंत्र शुद्धात्म परिष्कृतिमां खेलो ते-  
 र्थांज एकांतीक अत्यंतीक आनंद उपजे. अहिंसा  
 कई फलेश के परतंत्रता छे नहीं ॥ १ ॥

वास वराम सुरुचि केशर घन, बांटो  
 परम प्रमोद रे ॥ नि० आत्म रमण गुलाळ  
 की लाली, साधक शक्ति विनोदरे ॥ निज ॥ २ ॥

अर्थ:-शुद्धात्मम परिष्कृतिमां उपयोगनो वास  
 करघां ते रूप वरामनी शीतल ल्यो अने शुद्धात्म  
 गुण समुदायमां रुही परम रूचि रूप अधारंघ  
 केशर परमानंदे निज अंगे बांटो अने रम्य आत्म  
 गुणमां रमण रीक्त रक्त परिणाम रूप गुलाळनी  
 लाली आत्म अंगे चद्रे तेथी साधक जीवने आपणी  
 अमंत स्वतंत्र शक्तिनां विशेष प्रमोद हर्ष  
 उपजे ॥ २ ॥



भिन्न भिन्न चिन्तारी जे जे ना ते तेनामां समाधी पर  
 तक्षणधी परम उदासीन थयुं ते पृथक्त्वचित्तर्क  
 स्वपर चिन्तार नामा शुक्लध्याननो पहेलो पांयो  
 अने आपणा अनंत पर्वायो गुणोमां अने इध्यमां  
 संक्रमाधी अभेद निधिवरूप उडवल समयानंतर  
 आलंड ध्यानरूप शुक्लध्यानना एकत्वचित्तर्क अपर  
 चिन्तार नामा बीजा पायानी उवाळत्य उयोति रूप  
 होलीनी ज्वालामां कर्मरूप कटोर काष्ठ पाली भस्म  
 करी खाए उद्याधी चौदमा शुण्ठाणामा कंते श्रेय  
 पार तेर प्रकृति दल खेरघवा रूप निर्भरा ते व्युद्धि-  
 क्रिया निवृत्तिरूप भस्मखेल अति जोरे करी सकलं  
 कर्म पापमल धाई शुद्ध ब्रह्मरूप परमहि

परिणतिर्ना पूर्ण प्रगट्गा पाये. मुनिभ्यो एव त्रिज  
शुद्धात्म शक्ति साधे ॥ ५ ॥

सकल अज्ञांग अलेख त्रामंगत, नाहिं हांये  
सिद्ध रे ॥ निज० ॥ देषचंड आणामं खेले, उत्तम  
शुंहिं प्रसिद्ध रे ॥ निज० ॥

अर्थः-अने मन घचन काया तथा अन्य सर्वे  
पुद्गल योग रहित तथा लेश्या रहित अत्र पर संग  
रहित दोष एटले भोगादिकर्षी नाही पोई सिद्ध  
अई शिव महेलमां शिष्ययपु संगे आदि अनंत स्व-  
तंत्र आनंद भोगये. देषचट मुनि क हेवे के जे त्रिजे-  
श्वरनी शुद्ध स्यादाद आणामां खेलाबुं तेज उत्तम  
सिद्धि सुख प्राप्तवानुं उत्तम प्रसिद्ध साधन वे ॥६॥



॥ अथ पंचम श्री विमलजिन स्तवन ॥

॥ राग-कहम्बो ॥

धन्य ! तुं धन्य तुं ! धन्य ! जिनराज तुं,  
 धन्य ! तुज शक्ति व्यक्ति सनूरी ॥ कार्य क-  
 रण दश सहज उपगारता, शुद्ध कर्तृत्व परि-  
 णाम पूरी ॥ धन्य० ॥ १ ॥

अर्थ:-हे ! श्री विमलनाथ स्वामी तुं धन्य  
 के मांहादिक सकल कर्म शधुनें जीतो आत्म सत्ता  
 भूमि पांगाने तावे करी अखंड राज्य भोगवो जो  
 वली ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादिक ताहसुं धन जे  
 बली धन्य ! तमने के हमारा मरत्या रंक जीवो  
 सहज आत्म शुद्धतारूप धन दयावी धनबंत करी  
 जो ए आदि अनेक प्रकारे तमने धन्य ! जे धन्य  
 तमारी शक्ति के जे महा तेजवत व्यक्त (प्रगट  
 र्थे जे, ज्ञानादिक सकल गुणकार्यरूप कार्यदय  
 तथा ने कार्यना कारण रूपे बली पर्यायनी प्रकृति  
 एम धाये फारया दया ए बने तमारी तमाराम  
 अमेदपयो जे बली हमारा पण आत्म सिद्धि कारे



जोडायेला छे त्यांची तोडी हमारा ज्ञानादि आत्म  
कार्य सन्मुख प्रवर्तनीशुं तो हमारुं पण कार्य सिद्ध  
पक्षे एमां कंई शंका नथी ॥ २ ॥

दास बहु मन भासन रमण एकता, प्रभु  
गुणालंबनी शुद्ध थाये । बंधना हेतु रागादि  
तुज गुण रसी, तेह साधक अवस्था उपाय ।  
धन्य तु ॥ ३

अर्थ:-ताहरी आज्ञा सेवकाचाला ताहरा दासने  
ताहरा गुणोनो परम आदर बहु सन्मान आववाथी  
ताहरा गुणो यथार्थ भासे थने रमण पण तमारा  
शुद्ध गुणोमां थाय अने साधकना परिणाम विषया-  
दिक पुद्गल गुणोमां जोडायेला ते त्यांची छुटी  
ताहरा शुद्ध गुणोमां एकत्वपणे रमे ते साधक प्रभु  
गुण आलंबनी थई पोताना ज्ञानादिक गुणो राग  
रहित करी शुद्ध थाय अने कर्मबंधना हेतु रागादि  
तथा मन ईद्रियो आदि परं गुण रसी हता ते प्रभु  
गुण रसी थई पोतानो शुद्ध मिद्धिनी साधक दर्शा  
उपजावे एटके बंध हेतुता टली मोक्ष हेतु थाय ॥३॥





सकल प्रदेश समकाल सवि कार्यता,  
करण सहकार कर्तृत्व भावो ॥ द्रव्य प्रदेशं  
पर्याय आगमपणे, अचल असहाय अक्रिय  
दावो ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

अर्थ:-प्रभुने सर्वे समय समकाले सर्वे कार्यनी  
कारणताना करण रुपे छती अविभागी पर्याय अ-  
नंता छे ते छतीपर्यायरुप करणनी प्रवृत्ति रुप कार-  
णनी सहाये सर्वे कार्य समकाले थया करे छे पण  
द्रव्यना प्रदेशरुप पर्याय आगममां कक्षा प्रमाणे  
अचल असहाय अने अक्रियपणे छे एटले प्रदेश  
कांई कार्य करता नथी पण प्रदेशने आधारे छती  
अविभागी पर्यायो रक्षा तेज कार्य करवाना कार-  
णपणे प्रवृत्ति छे ॥ ५ ॥

उत्पत्ति नाश ध्रुव सर्वदा सर्वनी, पदगुणी  
हानीशुद्धि अनूचो, ॥ अस्ति नास्तित्व सत्ता  
अनादि थको, परिणामन भावथी नहीं अ-  
जूनो ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

कर्म जंजाल युंजनकरण योग जे, स्वामी  
भक्ति रम्या धिर समाधि दान तप शीउ व्रत  
नाथ आणा विना, थईय बाधक को भव  
उपाधि ॥ अन्व० ॥ ४ ॥

अर्थ:-पंच इंद्रियो अने मनचयन कायाना योग  
परद्रव्यमां रक्त पडे कर्म जंजाल निपजोय छं, ज्या-  
सुधी प्रभुनी आज्ञा जाणी आदरी नथी त्यांसुधी  
आत्मा कर्मचेतनापणे अने कर्मफलचेतनापणे परि-  
णम्या धको पुद्गल क्रियाधी सुख थाय पडले पुद्गल  
त्याग, ग्रहण प्रयतिथी सुख थाय छे एम जाया अणे  
योगो अने पंचे इंद्रिउं पुद्गल क्रियामां प्रयुजे ते  
वडे आठे कर्मनी जाल गुपी पोतेअ तंमां फसायो  
बंधायो रहे पण ज्यारे प्रभुनी आज्ञा जाणे सन्माने  
आदरे तपारे ते पंचेन्द्रियो अने अणे योग धिर समा-  
धिमां रमे अने प्रभुनी आज्ञा बहारनुं दान शीउ  
तप व्रतादि भावधर्म विना एकांते इहलोक आहा-  
रादि अर्थे, परलोक देवादि अर्थे, अपम न टालषा  
अने मानमेलषवा अर्थे जेजे अनुष्ठानो आदरे ते ते  
कर्मबंधनां कारण थई भवउपाधिने बघारनार थाय।४।

सकल परदेश समकाल सवि कार्यता,  
 करण सहकार कर्तृत्व भावो ॥ द्रव्य परदेशं  
 पर्याय आगमपणे, अचल असहाय अक्रिय  
 दावो ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

अर्थ:-प्रभुने सर्वे समय समकाले सर्वे कार्यनी  
 कारणताना करण रुपे छती अविभागी पर्याय अ-  
 नंता छे ते छतीपर्यायरुप करणनी प्रवृत्ति रुप कार-  
 णनी सहाये सर्वे कार्य समकाले धया करे छे पण  
 व्यना प्रदेशरुप पर्याय आगममा कथा प्रमाणे  
 प्रचल असहाय अने अक्रियपणे छे पटले प्रदेश  
 ती कार्य करता नथी पण प्रदेशने आधार छती  
 अविभागी पर्यायो रथा तेज कार्य करवाना कार-  
 णणे प्रवृत्ति छे ॥ ५ ॥

उत्पत्ति नाश ध्रुव सर्वदा सर्वनी, पद्गुणी  
 हार्नाशुद्धि अन्वूनो ॥ अस्ति नास्ति  
 अनादि धको, परिणामन भावयो  
 जूनो ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

અર્થ:-તે છતી પર્યાયો સર્વે સર્વદા કાર્યવળે  
 ઉપજે અને કારણ વળેથી વિણસે ઘલી કાર્યવળેથી  
 વિણસી કારણવળે ઉપજે ઘલી આવીઆવવળે ઉપ-  
 જે અને તીરોભાવવળેથી વિણસે ઘલીતીરો ભાવવળે  
 ઉપજે અને આવીઆવવળેથી વિણસે. ઘલી વદ્ગુણો  
 ઘૃદ્ધિ હાણી વળે ઉપજે વિણસે તેની વિગત:-

છતી પર્યાયમાંથી જે પ્રદેશે સામર્થ્યભાવે અ-  
 નંત પર્યાયો આવ્યા છે તેથી અન્ય પ્રદેશે તેજ સમ-  
 યે અનંતગુણો વળેથી સામર્થ્યવળે આવે ઘલી તેથી  
 અન્ય પ્રદેશે તેજ સમયે અસંખ્યાતગુણો વળેથી  
 સામર્થ્યવળે આવે-ઉપજે ઘલી તેજ સમયે તેથી  
 અન્ય પ્રદેશે અસંખ્યાતગુણો વળેથી સામર્થ્યવળે ઉપજે  
 ઘલી તેજ સમયે અન્ય પ્રદેશે અનંતમે ભાગે વળેથી  
 સામર્થ્યવળે ઉપજે ઘલી તેજ સમયે અન્ય પ્રદેશે  
 અસંખ્યાતમે ભાગે વળેથી સામર્થ્યવળે ઉપજે ઘલી  
 તેજ સમયે અન્ય પ્રદેશે સંખ્યાતમે ભાગે વળેથી  
 સામર્થ્યવળે ઉપજે વળે પ્રમાણે જુદા મેરે સામર્થ્ય  
 વળેથી વિણસે અને તીરોભાવે ઉપજે વળે વદ્ગુણો  
 હાણી અને ઘૃદ્ધિનો ઉત્પાદુ અને વ્યવ વળે સમય

सकाले धाप. ज्यां हाणीनो व्यय त्यां वृद्धिनो  
 त्याहु अने ज्यां वृद्धिनो व्यय त्यां हाणीनो उत्पाहु  
 म प्रदेशो आश्रित तिर्जवताए हाणी वृद्धि सम-  
 षी. ह्ये समय आश्रित उर्द्धताए पदगुण हाणी-  
 टि कहीए ढीए तेनी विगत:-

प्रथम समय जे प्रदेशे अनंता पर्याप्तो सामर्थ्य-  
 णे उत्पाहु हतो अने तीरोपणानो व्यय हतो तेज  
 प्रदेशे अन्य समये तेथी अनंतदुष्टा पर्याप्तो साम-  
 र्थ्यपणानो उत्पाहु अने तीरोपणे व्यय पली तेथी  
 अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी असंत्यातगुणा पर्या-  
 प्तो सामर्थ्यपणे उत्पाहु अने तीरोपणे व्यय पली  
 तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी संख्यात गुणा  
 पर्याप्तो सामर्थ्यपणे उत्पाहु अने तीरोपणे व्यय  
 पली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी अनंतमे  
 भागे पर्याप्तो सामर्थ्यपणे उत्पाहु अने तीरोपणे  
 व्यय पली तेथी अन्य समये तेज प्रदेशे तेथी अंत-  
 त्यातमे भागे पर्याप्तो सामर्थ्यपणे उत्पाहु अने  
 तीरोपणे व्यय पली तेथी अन्य समये तेज प्रा-  
 णे तेथी संख्यातमे भागे पर्याप्तो सामर्थ्यपणे उत्पाहु  
 अने तीरोपणे व्यय धाप एव समय आश्रित

स्वर्गुण हाणीवृद्धि जाणवी ते उर्द्धताए हाणीवृद्धि  
 कहीए. एम सिद्धांतमां विविध प्रकारे हाणीवृद्धि  
 कही छे ते सिद्धांतोथी समजी लेवी. ग्रंथ गौरव  
 माटे अहिंसां विशेष लक्ष्युं नथा अहिंसां स्वर्गुण  
 हाणीवृद्धि कही ते समासथी समजथी पण अनं-  
 ताना अनंत, असंख्यामाना अक्षरुपात अने सं-  
 ख्याताना संख्यात भेद छे ते सर्वे मलीने अनंत-  
 गुण हाणीवृद्धि समजवी.

ए पदगुण हाणीवृद्धि रूप परिणमन कछुं तेम  
 सर्वे समय अस्ति अस्तिरूप परिणामे, नास्ति ना-  
 स्तिरूप परिणामे, ज्ञानपर्याय ज्ञानपणे, दर्शनपर्याय  
 दर्शनपणे, वर्णपर्याय वर्णपणे. गंधपणे ए आदि जे  
 जे द्रव्यमां जे जे सामान्य विशेष स्वभाय हांप  
 ते ते सर्वे समय ते ते स्वेज परिणामे. एम परिण-  
 मन धर्म अनादिर्था सर्वे द्रव्यमां छे काई नथा नथां  
 नथां अने जूनां मटतो नथां पण नदि नदि स्वर्गुण  
 परिणतिण परिणामे, यतः भगवई अनेः—“अतिथि  
 ते अतिथितं परिणमयी नतिथि ते नतिथितं परि-  
 णमयी” एटले काई द्रव्य स्वस्वरूप अग

स्वस्वभाष छोड़े नहीं अने अन्य स्वभावने ग्रहे नहीं  
 पण मिध्यात्वी महिरास्मा जीवनी द्रष्टी आत्मस्व-  
 भाष बाहिर बत्ते छे तेथी पोताना शुद्ध परिणमन  
 तरफ द्रष्टी बिना ते शुद्ध भाषने जाणी आदरी  
 शक्तो नथी एटलेज पुद्गल परिणतिमां पोतानुं  
 कार्य मानी ज्ञान दर्शन चरण वीर्यादि गुणोने पुद्ग-  
 ल परिणतिमां रोके छे तेथी स्वगुणो अचरापी थल  
 अने मलीन धई शुद्ध स्वगुण कार्य करी शक्ता नथी  
 तेथी शुद्ध स्वतंत्र परमाणंदनो भोग केम लेई शकाय ?  
 अपात् मज लेई शकाय. माटे विमल जिनेश्वरनां  
 विमल घचनो हृदयमां धारी परम सन्माने प्रभु  
 जालंपने बत्ते ते सकल दुःखथी निवृत्ति परमाणंद  
 प्राप्त करे, यली सयें द्रष्टने पद्गुण हाणी वृद्धिमां  
 कोई समय पण न्यूनपणुं के अधिकापणुं धतुं नथी.  
 द्रव्यमां अगुणलघुनुं एक अमंड बक्र. छे ते सर्वे  
 समम परिणमे-फरे. प्रदेश गते हाणी वृद्धि कहे-  
 वाय पण द्रव्य स्वभावे तो गुण लघु भतो नथी  
 तेथी अगुणलघु नामे ष गुण जाणवो, पंचास्ति  
 द्रव्यने स्वद्रव्ये स्वक्षेत्रे स्वकाले अने स्वभावे अस्ति-  
 पणुं छे अने परद्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव



रूप ध्यानी सत्ता स्वद्रव्यादिकर्मा नथी एतले पर-  
 द्रव्य परक्षेत्र परकाल अने परभाव रूप न ध्या दे-  
 यानी सत्ता द्रव्यमां छे तेनेज नास्तिस्वभाव कही-  
 ए. एम सदा स्वद्रव्यादिके रहेवुं ते अस्तित्वभाय  
 अने परद्रव्यादिके ध्यानी स्वभाव पोतामां नही  
 ते नास्तिस्वभाव कहीए. ते नास्तित्वस्वभाय एए  
 द्रव्यमां छतो छे आस्तित्वस्वभाव सर्वे समय स्व  
 द्रव्यादिकेने उत्तीरणे राखे अने नास्तिस्वभाव ते  
 परद्रव्यादिकरणे न ध्या दे ए पने स्वभाव द्रव्यना  
 द्रव्यधी अभेदपणे जाणवा. एम नित्य स्वभाव,  
 अनित्यस्वभाव, भेदस्वभाव, अभेदस्वभाव, भव्यस्व-  
 भाव, अभव्यस्वभाव, एम द्रव्यना सामान्य विशेष-  
 यादि अनेक स्वभाव द्रव्यमां द्रव्यधी अभेदपणे छे  
 तेमांही मुख्यपणे कोई कोई ठेकाणे ओछा अधिका  
 मुख्य स्वभाव दर्शाव्या छे एण द्रव्य अनंत स्व-  
 भावी छे. ते सर्वे स्वभावना परिणमन भाव सति-  
 त द्रव्य अनादिनां छे एण नथो परिणमन भावी  
 यथो नथी. सर्वे समय आप आपणा परिणामिक-  
 ताने कोई द्रव्य के कोई गुणो के कोई पर्यायो चूके  
 नहीं. कोईनी परिणामिकता कोईधी रोक्याय नहीं

माटे शुद्धात्म परिणामिकता अखंड जाणी निर्मय  
 निराकुलपणे स्व छती पर्यायना अनंत स्वतंत्र आ-  
 नंदमा मग रहेयुं. ज्यांसुधी आत्म शुद्धतानुं ज्ञान  
 नधी त्यांसुधी जीव विभावतामां रमी दुःखी रहे  
 छे पण शुद्धात्म ज्ञान थया आदरथा पछी विभाव-  
 तानो अंश रहे नहीं तो दुःख शाने होय ? माटे  
 आत्मा पूर्ण स्वगुण पर्यायने जाणी परमानंद भोगी  
 थाय माटे अघसर पामी प्रमाद छोड़ी शुद्ध सदा-  
 गम सेवी परमानंद भोगी थयुं एज उपदेश छे ॥६॥

ईणी परे विमल जिनराजनी विमलता,  
 ध्यान मन मंदिर जेह ध्यावे ॥ ध्यान पृथक्-  
 त्व सविकल्पता रंगथी, ध्यान एकत्व अवि-  
 कल्प आवे ॥ ७ ॥

अर्थ:-ए प्रमाणे विमल जिनेश्वरनी पूर्ण विम-  
 लता ऊलखी मन मंदिरमां विमलतानु ध्यान ध्याय  
 ते प्रत्येक द्रव्यना भिन्न भिन्न गुण पर्यायोना भिन्न  
 भिन्न विचार रूप पृथक्त्ववितर्क नामा सविकल्प  
 ध्यान रंगे करी करे तेज पुरुष स्वगुण पर्याय

स्वरूपभी अभेदगणे जाणे अने तेनेज एतएवगणे  
 विरल इदिस जूड शुभनएवज अणे, एण तिन  
 आजाभी जे विरल हे ते गुणना अभिवाग जाण्णी  
 विना एवेग केतो अने एवज विधि केतो तेने ते  
 इजाने ? अर्थात् नज जाणे. एते एतएव संजे  
 इदि जूड एवेग अने वुड एवज विधि जाणी शुभल-  
 एवज एते उचत परिणामी भवु एतएव ननपानी  
 कर्मनी नश करी शकएग ॥ ७ ॥

उक्तंच “ जो जाणइ अरिहंते, दृढ गुण  
 पश्यंतंतेहि ॥ सो जाणइ अप्पाणं, मोहो  
 खलु जाहि तस्स लयं ” वीतरागी असंगी  
 अनंगी प्रभु, नाण अप्रयास अविनाश धारो ॥  
 देवचंद्र शुद्ध सत्ता रसी सेवतां, संपदा आरम  
 शोभा वधारी ॥ धन्य० ॥ ८ ॥

अर्थ:-प्रभुने राग सर्वादेशे नश भयो ते अने  
 पर द्रव्यादिकनो संग नथा तथा औदारिकादि पुद्ग-  
 ललीक विनाशीक अंग एण नथा तथी ज्ञान दर्शन  
 वरण अने धीर्यादि अनंत गुणो परम निमल अने

धिर धया छे अने अंग रहित तथा पर संग रहित  
 धया भाटे ते गुणो मलिन धवाने निमित्त पण नथी  
 अने जेना ज्ञानादि गुणा, दिनाप्रयासे सहज स्व-  
 तंत्रपणे सकल समय पूर्ण पर्याये प्रगटपणे वर्त्तं छे  
 अने पोतानुं आत्म अंग अने आत्मिक विद्धि अनंत-  
 कालसुधी अक्षय अविनाशीपणे प्रगट सिद्धता  
 पाम्या छे एहया चारे निकायना देवोमां चंद्रमा  
 समाग शुद्ध सत्ता रसी प्रभुजीने शुद्ध सत्ता रसीचां  
 परी सेवे ते स्वभाविक आत्मीक संपदा घारी  
 थाय ॥ ८ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ पष्ठम श्री सर्वानुभूति जिन स्तवन ॥

॥ जगजीवन जगयालंदो ॥ ए देशी ॥

जग तारक प्रभु वीनवुं, विनतडी अव-  
 धारे ॥ तुज दरशन विण हू भूम्यो, काल  
 अनंत अपाररे ॥ जग० ॥ १ ॥

अर्थ:-शुद्धात्म अनंत गुण पर्यायनी सकल  
 समय जेने अनुभव विलास छे एया सर्वानुभूति  
 नामा छद्दा तीर्थकार, जग-जीवोना तारक तमारा

आगल हूं अरज करूं छुं ले माहरी अरज अयधारीं।  
 तमारा सरखा उपकारीनी आणा अणजाणनीं  
 तमारा दर्शावेला जीयादिक नय पदार्थना भाष मने  
 दृश्यो नहीं स्यांसुधी देहादिकनी ममताण ज्ञाना-  
 घरणादिक आठ कर्म बांधो भय यनमां भूलो भडकी  
 अनादि अनंत अपार काल आज सुधी में बहु  
 बहु दुःख सखां ॥ १ ॥

सुहम निगोद भवे वस्यो, पुद्गल परि-  
 अट्ट अनंत रे ॥ अव्यवहारणे भस्यो, धुल्लक  
 भव अस्यंतरे ॥ जग० ॥ २ ॥

अर्थः—सूक्ष्म निगोदमां अनंत पुद्गलपरावर्तन  
 करपी अने अनंत कालसुधी व्यवहार राशीमां पण  
 आड्यो नहीं, बलवंत पुरुषना एक स्वासो स्वासमां  
 अर्दार वसत अनस्यो अने सत्तर वसत मरण करधुं  
 एम धुल्लक भव अंत रहित करवा बली कपाय  
 अने मारणांतिक समुद्घातनी वेदना धारंवार सही  
 बिभ्राम न पास्यो ॥ २ ॥

व्यवहारे पण तिरिखि गते, ईग वण खंड

असन्नी रे ॥ असंख्य परावर्त्तन तथां, भमियो  
जीव अधत्तरे ॥ जग० ॥ ३ ॥

अर्थः—व्यवहार राशीमां आख्या पक्षी पण ति-  
र्थेच गतिमां एकेंद्रिय चनस्पति अने असंज्ञीपणामां  
असंख्यातां पुद्गलपरावर्त्तन करयां. एम मारा ज्ञान  
दर्शनादि निज धन विना अधत्त एहवो हुं नीच-  
पणामां भम्यो ॥ ३ ॥

सूक्ष्म थावर चारमें, कालह चक्र असंख-  
यरे ॥ जन्म मरण बहुळां करयां, पुद्गल  
भोगनी कं:खरे ॥ जग० ॥ ४ ॥

अर्थः—वली पृथ्वी, अप, तेव अने वायु ए चार  
सूक्ष्म थावरमां असंख्याता क लचक्रसुधी उपज्यो  
मरयो. एम पुद्गल भोगनी आकांक्षाए तथा  
आहारादि चार संज्ञा वशे अथाग जन्म मरण  
कर्यां ॥ ४ ॥

आधे वादर भावमें, वादर तरु पण ईमरे  
॥ पुद्गल अढी लागट वस्यो, नाम नि-  
प्रेमरे ॥ जग० ॥ ५ ॥

अर्थः-श्रोत्रे यादर भावमां एटले यादर निर्गो  
साधारण थनंत काय वनस्पतिमां पण सर्वा  
थडी पुद्गलपरावर्त्तन मुधी लागलो भम्भो ॥ ५ ॥

स्थावर थूल परितमें, सीत्तर कोडाकोडि  
॥ आपर भम्भो प्रभु नवि मिल्या, मिथ  
अधिरती जोडिरे ॥ जग० ॥ ६ ॥

अर्थः-यादर प्रत्येक पंचे भावर्मा सीत्तर कां  
कोडी सागरोपम भम्भो पण तुम समान ता  
दीनदयाल मल्लो नहीं तेथी मिथ्यान्व अने अ  
रती संगे रण्यो ॥ ६ ॥

विगळपणे लागट वस्यो, सांखिज वा  
हजाररे ॥ यादर पज्ज वणस्सई, भू जल व  
मझाररे ॥ जग० ॥ ७ ॥ अनल विगळ पज्ज  
में, तस भव आयु प्रमाणरे ॥ शुद्ध तत्त्व प्रा  
धिना, भट्ठयो नव नव टाणो ॥ जग० ८ ॥

अर्थः-अर्थासा विकसंदिपरणें लागलो इ  
पाना हजार परस सुधी भम्भो अने यादर प्र

पर्याप्ता वनस्पति तथा पृथ्वी अप अने वायुमां तथा  
 अग्नि तथा पर्याप्ता विकलेन्द्रियमां ते ते भवना आयु  
 प्रनाहमा शुद्ध देव, शुद्ध गुरु, शुद्ध घर्मनी प्राप्ति  
 विना नवे नवे स्थान के भटक्यो ॥ ८ ॥

साधिक सागरं सहस्र दो, भोगवीयो तस  
 भोवेरे ॥ एक सहस्र साधिक दधी, पंचेंद्रि  
 पद दावेरे ॥ जग० ॥ ९ ॥

अर्थः—सरबाले वे हजार सागरोंपमयी काईक  
 अधिक ते भावने भोगव्यो, एक हजार सागरोंप-  
 मयी काईक अधिक पंचेंद्रियपथामां भव्यो.

पर परिणति रागीपणे, पर रस रंगे रक्करे ॥  
 पर ग्राहक रक्षकपणे, पर भोगे आशक्करे ॥  
 ज० ॥ १० ॥

अर्थः—पुद्गल परिणतिना रागीपणे, पुद्गल  
 परिणति रस रंगे रक्त यईने, पुद्गल परिणति  
 ग्रहणताए तथा परपरिणति रक्षक प्रवृत्तिप, पर-  
 परिणति भोग भोगवबानी आशक्ती लोडुपताए  
 शुद्धात्म तत्त्व दर्शु नरीतेपो एवां भ्रम



શુદ્ધ સ્વજાતિ તત્ત્વને, ઘટ્ટમાને તહીનેરે ॥  
તે વિજાતી રસતા તજી, સ્વસ્વરૂપ રસ  
પીનેરે ॥ જગ૦ ॥ ૧૧ ॥

અર્થ:-જે ગુણ્ય શુદ્ધ સ્વજાતી તરણ કે૦ આમ  
જાતો થી ઉપન્યા જે શુદ્ધ જ્ઞાન દર્શન ગરમ ગુણ  
ધીર્ધાદિક સાર તત્ત્વ તેનો રસીઓ થઈ તત્ત્વઘટ્ટમા  
તત્ત્વમાં લીન થયો તે વિજાતો કે૦ ગુદ્ગલથી ઉપન્યા  
ધર્મ ગંધ રસ સ્પર્શ આકાર શબ્દ ઉચ્ચોચ કાર્ત્ત  
હ્યાયા પ્રભા છોહી માંમ ધીર્ય સ્વભા રત્ન મતિ  
માણેક સુષર્ણ રૂપું દેય દેયો નર નારી તિપ્પણ સંતા  
કુદુમ્ય ઓદારિકશક્તિ ધૈર્યિકશક્તિ આહારકશક્તિ  
તૈજસશક્તિ કાર્મણશક્તિ ઇત્યાદિ જે જે ગુદ્ગલો  
ઉપજે છે તે ધર્મ ગુદ્ગલ જાતી ઘટ્ટલે આત્માને  
વિજાતી છે તે સકલ વિજાતીના રસ આસ્વાદ  
તજે તે પોતાના જ્ઞાન ધીર્યાદિ શુદ્ધ સ્વસ્વરૂપ રા  
ગુદ્ધ ધાવ ઘટ્ટલે સકલ કર્મ અરિ નાશ કરવાને  
ઉત્કૃષ્ટ શક્તિ પામે અને જ્ઞાનાદિ સ્વગુણોમાં અઘલ  
ધીર્ય રૂપ પરમ સ્થિરતા પામે ॥ ૧૧ ॥

શ્રી સર્વાનુભૂતિ જિનેશ્વરરૂ, તારક લાયક

देवरे ॥ तुम चरणे शरणे रह्यो, टलें अनादि  
कुटव रे ॥ जग० ॥ १२ ॥

अर्थ:-श्री सर्वात्तभूति जिनेश्वर तेज भवि  
जीवोने तारवा लायक देख छे. जे भव्य तमामं  
चरण शरण आदरे-स्वभावाचरणमां रहे तेने  
अनादि कर्मबंधनी माठी टेव टले ॥ १२ ॥

सबला साहिय ओलगे, आतम सबलो  
थायरे ॥ बाधक परिणति सवि टले, साधक  
सिद्धि कहायरे ॥ जग० ॥ १३ ॥

अर्थ:-बलवंत साहेबने अरज करबाथो अने  
बलवंत साहेबनी महेश्वरी आत्मा पण कर्म नाश  
करबा अने आत्म सत्ताभूमि कपजे करी आत्मिक  
राज भोगववाने बलवंत थाय. एम प्रभु आभित  
बलें तेने बाधकतानी एटले कर्मबंधनी उत्तर प्रकृति  
एकसो धीश बांधवानो टेव छे ते टेव टले एटले  
साधकता पामो सिद्धि पामे ॥ १३ ॥

कारणयी कारज हुवे, ए परतित अनादिरे ॥  
माहरा आतम सिद्धिना, निमित्त हेतु प्रभु

सादिरे ॥ जग० ॥ १४ ॥

अर्थः-जे कार्यनुं जे कारण होय ते कारण यदंत  
ने कार्य थाय ए अनादिना निःशंक रीत छे. माहा  
आत्म सिद्धिना निमित्त कारण आजधी प्रभुजी  
तमेज छो ॥ १४ ॥

अविसंवादन हेतुनी, द्रढ सेवा अभ्यासरे ॥  
देवचंद्र पद निपजे, पूर्णानंद विलासरे ॥  
जग० ॥ १५ ॥

अर्थः-भव्यने संसारधी तारनार प्रभुजी अवि-  
संवाद हेतु छे. जे भव्य तेमनी द्रढ सेवा के० आज्ञा  
द्रढ परिणामे सेववानो अभ्यास राखे ते देवमा  
चंद्रमा समान पूर्णानंद पदवीनो विलास पामे ॥१५॥



गोवंत धइ समभाव आदरी सहज आत्मिक  
रुल साची सिद्धि पासीय ! ॥ ३ ॥

एक वचन जिन आगमनो लही, निपा-  
रां निज काम ॥ जि० ॥ एटले आगम  
रण संपजे, ढील धई किम आम ॥ जि०  
से० ॥ ४ ॥

अर्थ:-कोईक पुढ्योए एकज वचन जिनआगमनुं  
मी जायी आदरीने आगमसिद्धिरुप कार्य निपा-  
र्युं अने माहरा सरखाने एटलां बर्षा आगम  
चन जाण्यो वता पण सिद्धि नाटे आम केम  
पल धइ ! ॥ ४ ॥

श्रीधर जिन नामे बहु निस्तयीं, अल्प  
प्रयासे हो जेह ॥ जि० ॥ मुज सरखी एट-  
ले कारण लहे, न, तरे कहो किम तेह ॥  
जि० ॥ ५ ॥

अर्थ:-श्रीधरस्वामीना नामधी (वचनधी) अ-  
ल्पप्रयासे पण बहु जीवो तार पाय्या

अर्थ:-भक्तजीयो अने अभक्तजीयो ए वें अनंता अनंता हे तेमां हूं भक्त हूंके अभक्त हूं। वली कृष्णपक्षी अने शुक्लपक्षी जीयो तेंप अनंता हे अटले जे घरमपुद्गलपरावर्त्तने वत्तें हे ते शुक्लपक्षी जाणया अने जे अणरपुद्गलपरावर्त्तने वत्तें हे ते कृष्णपक्षी कहोण. तेमां हूं शुक्ल पक्षी हूं के कृष्णपक्षी हूं ? वली जे जिनेश्वरनं आशामां वत्तें हे ते मोक्षमार्गना तथा आत्मशुद्धताना आराधक हे अने जे तीर्थकरोनी आशा पाहिर वत्तें हे ते प्रभुआणाना, मोक्षमार्गना अं आत्मशुद्धताना विराधक हे तेमां हूं आराधक के विराधक हूं ? ए आदि पक्षो पूखी निरधा करत ॥ २ ॥

किण काले कारण केहवे मले, थासे मुजने हो सिद्धि ॥ जि० ॥ आत्म तत्त्व रुची निज रिद्धिनी, लहिशुं सर्व समृद्धि ॥ जि० । से मुख० ॥ ३ ॥

अर्थ:-माहरे कए काले अने कोण कारण मल वापी सिद्धि पशे ? वली क्यारे हूं आत्मतत्त्व

एषीवंत यह समभाव आदरी सहज आत्मिक  
मरुल साची रिद्धि पामीश ? ॥ ३ ॥

एक वचन जिन आगमनो लही, निपा-  
ट्यां निज काम ॥ जि० ॥ एटले आगम  
कारण संपजे, हील थई किम आम ॥ जि०  
॥ से० ॥ ४ ॥

अर्थ:-कोईक पुटपोए एकज वचन जिनागमनुं  
पामी जाणी आदरीने आत्मसिद्धिरुप कार्य निप-  
जाव्युं अने माहुरा सरखाने एटलां घर्षा आगम  
वचन जाण्यां वता पण सिद्धि माटे आम कोम  
हील यह ? ॥ ४ ॥

श्रीपर जिन नामे बहु निस्तयां, अल्प  
प्रयासे हो जेह ॥ जि० ॥ मुज सरिसो एट-  
ले कारण लहे, न, तरे कहो किम तेह ॥  
जि० ॥ ५ ॥

अर्थ:-श्रीपररपामीना नामधी (वचनधी) अ-  
ल्पप्रयासे पण बहु जीवो संसार निस्तार पाव-

एतन्ने संसारसमुद्रनो मज्जे पाए पाप्मा, जेस ध  
 पाइमुनि नाइकर्णने सेर रणा अने नाइक का  
 घना पण एकए अनिष्पनावनाए शुद्धात्मन  
 विचार करता एतन्ने अण्य घणाओ केवलज्ञान पाव  
 गम भरतादिक अनैक जीवो अण्य प्रणामे केर  
 ज्ञान पायी सिद्धि परना से अने साहस सामाने  
 केटलाक घणा कारण मग्घा अने घणाए परे से ते  
 पण तरता नथी तेनुं शेकारण ? ॥ ५ ॥

कारण जोगे साधे तरने, नवि समाधे  
 उपादान ॥ जि० ॥ भी जिनराज प्रकाशे  
 मुज प्रते, तेहनो कोण निदान ॥ जि० ॥  
 से० ॥ ६ ॥

अर्थ:-केटलाक मात्र एकांत कारण जोगप्रवृत्ति  
 ए तस्य साधया इच्छे से पण उपादान संभारता  
 सुधारता नथी. जेस कोई घट करवानो अर्थे दंड  
 घटे चक्र फेरव्या करे एही कारण प्रवृत्तिनी अनेक  
 क्रिया कोटाकोड़ी धरससुधो करवां करे पण घटनुं  
 उपादान जे मृत्तिका ते मांहे पिंड धास कोस शु

शुभ भौषादि घटपर्यायना यथायोग्य जेवा घाटं छे  
 तेषा मृत्तिका विंदमां काटे नहीं अने मात्र बाह्य  
 कारणप्रवृत्ति क्रोडाक्रोही थी पण अधिककालसुधी  
 कार्याकरे तोपण ते घट नियमा यथानो नथी तेम  
 कोई जीय आत्मसिद्धि अर्थे एकांते कारणप्रवृत्तिनी  
 क्रिया अनंतकालसुधी करे अने उत्सर्ग आत्मभं-  
 गमां सम्पन्न, विरती, अप्रमादता, अकपायता,  
 धिरता आदि जे जे पर्यायो सिद्धमां छे ते ते  
 पर्यायानु आत्मभंगमां संपादान करे नहीं तो कोई  
 काले पण आत्मसिद्धि धाय नहीं पण सिद्ध भंग-  
 रंतमां शुद्ध द्रव्यपर्याय अने शुद्ध गुणपर्यायादिनुं  
 जेयुं स्वरूप छे तेयुं स्वरूप आत्मभंगमां संपादान  
 करे एदले आत्मा आत्म परिणाम घडे आत्म संपदा  
 दान आत्माने एदले पोते पोताने आपे तोज सिद्धि  
 रूप कार्य धाय, ते तो प्रभु बाणीमा अजाणने एकांत-  
 तानो भायरोग सत्तामां रह्यो छे तेथी ते कार्यसिद्धि  
 केम करी शके ? तो, हे जिनराज अने यथापी के  
 एकांतता रूप भायरोगानु मूल निदान शु. छे १. ॥६॥

भाव रोगना वैद्य जिनेश्वरु, भावोपघ तुज  
 भक्ति ॥ जि० देवचंद्रने श्री अरिहंतनी, छे



आधार ए कि ॥ जि० ॥ से० ॥ ७ ॥

अर्थ:-हूँ तोर्यंक्षोनाज घचनथी जाणुं हूँ  
एकांतता रूप भायरोग नाश करवा माटे देव  
तो जिनेश्वर छे अने जिनेश्वरनी आशाए वसंत  
रूप जिनभक्ति तेज भायरोग नाश करवानो उत  
ईलाज छे माटे देवचंद्र मुनि कहे छे के माहरे  
अरिहंत देवनोज आधार छे के एमना घचन आशि  
हूँ मारा भायरोगने दूर करी आत्मसिद्धि वरुं  
प्रगट छे ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टम श्रीदत्तप्रभु स्तवन ॥

॥ राग धमाक ॥

जिन सेवनते पाईये ह्यो, शुद्धात्म मक  
रंद ॥ ए आंकणी ॥ तत्त्व प्रतित वसंत ऋ  
प्रगटी, गई सिक्षिर कुप्रतीत ॥ ललना दु  
मति रानी लघु भई हो, सदबोध दिव  
वदीत ॥ ललना ॥ जि० ॥ १ ॥

अर्थ:-जिनेश्वरनी आशा सेवयाथी आ  
शुद्धता सुवास रसस्वाद पामीए. जेम अमरो ह

गंधी फूलोमांधी रस खेंची सुवास युक्त स्वाद हो  
 छे तेम आत्मामां भोगीपणुं छे पण ज्यांसुधी पोता-  
 तुं शुद्ध स्वरूप जाण्युं नथी त्यांसुधी पुद्गलोमां  
 आपापणुं मानी पुद्गल स्वाद लेतो चउगति कंतार-  
 मां परतंत्रताए अनंत दुःख भोगवतो रहे छे पण  
 तेज आत्मा ज्यारे जिनेश्वरनी आज्ञा सेववाचालो  
 थाय त्यारेंज शुद्धात्म मकरंद के० आत्म शुद्धतामो  
 लक्षम सुवास रस स्वाद लेई शके. ज्यारे जिनेश्वरे  
 प्ररूपेला नये तत्त्वोनी द्रव्य भाव प्रतित सहृष्ट्या  
 रूची उपजे तथा तत्त्वोमां संशय, विभ्रम, विमोह  
 रहे नहि त्यारेंज जीव सम्यकदर्शन पामे पटले  
 निःशंकनादि आठ गुणो प्रगट थाय ए प्रमाणे तत्त्व  
 प्रतित धवाधी आत्म उपयोग आत्म शुद्धतामां  
 वसवा लाग्यो ते रूप वसंत श्रुतु प्रगटी. त्यारे तत्-  
 त्वोनी अप्रतित रूप शीत काल दूर धयां अने आत्म  
 अनात्म अगर जीवादि नव तत्त्वना भाषनी प्रतित  
 पथाधी निष्प्राय अंधकारवाली रात्रि पण घटी गई  
 अने सद्योष रूप उद्योतवालो दिवस पण श्रुद्धि  
 पाम्यो ॥ १ ॥

साध्य रुचि मग्नता मिली हो. निज गण

आशा मंत्र ॥ ८० ॥ वाक् नमो नमो नमो नमो,   
 बुद्ध बुद्ध बुद्ध बुद्ध ॥ ८० ॥ जि० ॥ २ ॥

अर्थ-बुद्धान्न साध्य साधकानि अर्थान्न तथा   
 अर्थान् बुद्धान् साधकान् बुद्धान् अर्थान् बुद्धान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् तथा अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्

प्रबु धृग गान सुखं शु हो, वाजिप्र अति-   
 शय गान ॥ ८० ॥ शुद्ध तत्त्व बहुमानता हो,   
 अर्थान् प्रबु धृग ध्यान ॥ ८० ॥ जि० ॥ ३ ॥

अर्थ-अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्   
 अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान् अर्थान्

बहुमानपणे प्रमुगुण ध्यानमां एटले शुद्ध सिद्ध गुण  
 ध्यानमां खेलवा लाग्या एटले अन्य ध्येयमां ऊर्तु  
 वित्त वाली शुद्ध ध्येयमां धिरतावेरमण करयु ॥ ३ ॥

गुणं बहुमान गुलालसो हो, लाल भए  
 भवि जीव ॥ ल० राग प्रशस्तकी घूममें हो,  
 विभाव विडारे अतीव ॥ ल० ॥ जिन० १४१

अर्थ:-केवलज्ञानी ओना गुणबहुमानरूप गुला-  
 लनी लाली सम्यक्दर्शनी ओना अंगे चढी एटले  
 प्रशस्त रागनी घूम मची तेधी अतिशय विभाव  
 हेदथा लाग्या एटले ज्ञान दर्शन चरणादि गुणोनी  
 उज्वलता अने धिरता घघथा मांडी ॥ ४ ॥

जिन गुण खेलमें खेलते हो, प्रगटयो  
 निज गुण खेल ल० । आत्म घर आत्म  
 रमे हो, समतां सुमति के मेल ल० । जि० १५१

अर्थ:-एम भयने निज गुणं रूपाल खेलतां  
 शुद्धात्मगुण तेल प्रगट थयो त्यारे आत्मा पुद्गल  
 परिचरितरूप परपर छोडी स्वसत्ता भूमिरूप निज

घरमां शुद्धात्म परिणतिरूप सुमती साथे सुमतावं  
आत्मानो मेलाप थयो ॥ ५ ॥

तत्त्व प्रतीत प्याले भरे हो, जिन वाणी  
रसपान ॥ ल० निर्मल भाके लाळी जपी हो,  
रिंझे एकत्वता तान ॥ ल० ॥ जिन० ॥ ६ ॥

अर्थः-स्पारे पूर्ण तत्त्व प्रतीतरूप प्यालामां  
जिनवाणीरूप अमृतरस पान भरयुं अने सुमता  
समिति आदि सर्वे परिवारे पीयुं एटले जिनेश्वरनी  
आज्ञा सेषया परम धीरूप लाली आत्मअंगे प्रगट  
र्था पक्षी शुद्धात्म स्वरूपमां अखंड रींभरूप एकताउं  
तान लाग्युं ॥ ६ ॥

भव वेगग अधीरुं हो, चरण रमण  
सुमहंत ॥ ल० ॥ समिति गुपति वनिता रमे  
हो, खेले हो शुद्ध वसंत ॥ ल० ॥ जि० ॥ ७ ॥

अर्थः-यली भयभोग धैरागना रूप अर्था  
उदाव्युं एटले आत्मा सुमनिमंगे परम रुडा स्वभावा  
परघमां लाग्यो ते वेला विनयवनी पंच समिति  
अने प्रण गुप्ति पोताना स्वामी स्वभावाघरणी

आत्मापासे, खेलवा-रमवा लागी. एम स्वहृदमां  
पटले आत्म स्वप्रदेश हृदमां शुद्ध वसंत ख्याल  
सेले ॥ ७ ॥

चाचर गुण रसीया लिये हो, निज साधक  
परिणाम ॥ ल० कर्म प्रकृति अरति गई हो,  
उलसीत अमृत उद्दाम ॥ ल० ॥ जि० ॥ ८ ॥

अर्थ:- ते देवी भयि जीवरूप चाचर शुद्धात्म-  
गुण रसी थीं आत्म मिद्धि साधयाना परिणामी  
थया पटले मिध्यात्वादिक हेतु प्रवृत्तिण निवजाव्यां  
जे ज्ञानाचरणादिक कर्म तीया अज्ञान मिध्यात्व  
कपाय आदिकनी अरति थीं हती ते गई अने ज्ञान  
दर्शन चरण थीयांदि निज शुद्ध गुण रूप अमृत  
प्रगट थयुं-उर्द्धताण आध्युं पटले वलस्युं उद्दाम थयुं  
विभाष संपये पंचायेलुं आत्मधीर्ष मिध्यात्वादि-  
कयी छूटी उर्द्धताण आध्युं. पंचथी छूटी वपर आयथुं  
तेथुं नाम उद्दाम कहिए ॥

धिर उपयोग साधन मुखे हो, पिचकारीकी  
धार ॥ ल० ॥ उपशम रस भरी छांटता हो, गई

ततार्ह अपार ॥ ल० ॥ जि० ॥ ९ ॥

अर्थः-आत्म शुद्धता मुख्य साधनरूप मुख्य  
उपयोगनी धरता रूप विचकारोना सुवासित प्रा  
सममूयो. मिथ्यात्व कयायादिना उपदानरूप प्रमृ  
रस घाटवे करोने प्रथम जे मिथ्याभवं कयायादिना  
ततार्ह के- असत्य ततो हनी ते अपार तति समा  
गई अने समभायनो शीतल समाधि शान्ती प्रार  
धई ॥ ९ ॥

गुण पर्याय विचा तां हो, शक्ति व्यक्ति  
अनुभूति ॥ ल० ॥ द्रव्यास्तिक अवलंबता हो,  
ध्यान एकत्व प्रसूति ॥ ललना ॥  
॥ जि० ॥ १० ॥

अर्थः-स्वपर द्रव्यना गुणपर्याय विचार  
स्वगुण पर्याय स्वद्रव्यादिकधी भिन्न नहीं क  
परगुण पर्याय पर द्रव्यादिकधी भिन्न नहीं. क  
द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्यमां जतो आव  
नहीं, कोई द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्य  
निश्चय नहीं गुण दोष करी शकतो नहीं, को  
द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्यनो नहीं एम

जेनुं ते तेनुं जाणतां ममतां नो अंश रहती नयी  
 अने कोई द्रव्यनो गुणपर्याय कोई अन्य द्रव्यने  
 काममां आवतो नयी एम जाणवाधी रागांय रहेमां  
 नयी अने कोई द्रव्यनां गुण पर्याय कोई अन्य  
 द्रव्यने हाणी के दोष करी शकतो नयी एम जाण-  
 वाधी हेपांय पण नाश पासे हे माटे स्वपर द्रव्य  
 गुण पर्यायने भिन्न विचारतां पोतानी सर्व शक्ति  
 परंप्रता विना पोतामांज व्यक्ति पटले प्रगट पणे  
 जणाय हे. प्रगटपणे पोतानी ज्ञानादि शक्ति स्व-  
 तंत्रताये जपाई पटले तेनां अनुभव आनंद आवे  
 वे पटले विज्ञानरूप विमूढी प्रगट पाय हे. आत्म  
 द्रव्यना अनेन गुणो आत्मांमां अभेदपणे धर्मीरूप  
 हे ए अवलंबन लेतां पर द्रव्यादिकुं कोई काम  
 नयी तो परद्रव्यादिकनां विचार या माटे रहे?  
 अर्थात् नज रहे. एम एकत्वपणे आत्म शुद्धतामां  
 प्यान गिर पाय वे पटले शुद्ध प्यान इजने वे-जन्म  
 वे एम जाणुं ॥ १० ॥

राग प्रशस्त प्रभायनाहो, निमित्त हाण  
 उपभेद ॥ ८० ॥ निराधिकृत्य नुम गाभिमो हो  
 भये हे त्रिगुण अभेद ॥ ८० ॥ त्रि० ॥ ११ ॥



अर्थः परमम राग वदे पर जीवोने जिन अ  
 ध्यायी रूपी नगजावने ले निमित्त कारणो  
 भेद छे. द्वायमा गुणद्वारे संनवननो राग र  
 र्गोभूषा घनवननी अन्विण वेरयो जीव पर जीव  
 जिन शासनमा लावनयो परिणामी होव छे  
 परिणाम वण निमित्तनो एक भेद छे. अने व  
 मकल विकल्पां छोरी ज्ञान दर्शन वाणमण ए  
 अभेद भाग्य भावमा भीरता वामे छे. एज घमा  
 साधक जीवोना ज्ञान दर्शन वाणादि गुणां भाग्य  
 पो अभेदणो भगा छे एदते निर्विकल्प ज  
 समाधि वाग्ना छे ॥ ११ ॥

इम श्रीदत्त प्रभु गुणे हा, काम रमे मरि  
 वंत ॥ ल० ॥ पर वणिजति रज भोयके हं  
 निरमल सिद्धि वसंत ॥ ल० ॥ जि० ॥ १२ ॥

अर्थः-एम मतिवेल पुरुषो श्रीदत्त स्वामीना  
 शुद्ध गुणोभां वित्त समाध्या रूप काम रमे तैपी  
 अनदिनो परपरिणतिरूप जे मेल लाग्यो छे ते शुद्ध  
 स्वरूप समण रूप संघर नीरमां भीलमां कर्म रज  
 रूपमेल धोई निर्मल सिद्ध धई शिषपुरीमां वसे ॥१२॥

कारणधी कारज संघे हो, एह अनादकी  
 चाल ॥ ल० ॥ देवचंद्र पद पाइये हो, करत  
 निज भाव संभाल ॥ ल० ॥ जि० ॥ १३ ॥

अर्थ:-शुद्ध कारण आदर्यां कार्य सिद्ध पा-  
 वें ए अनादिनी रीत छं. तो श्रीदत्त स्वामीना  
 वचन रूप कारण पामो शुद्धात्म भाष संभालीए-  
 आदरीए तो देवमां चंद्रमा समान परमात्म पद  
 नीपजे ॥ १३ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ नवम श्री दामोदर जिन स्तवन ॥

॥ मोरा साहेब हो श्री शीतल नायके ॥ ए देशी ॥

सुप्रतीते हो करि थिर उपयोग के. दामो-  
 दर जिन बंदीये । अनादिनी हो जे मिथ्या  
 भ्रांति के. तेह सर्वथा छेदीये । अविरती हो  
 जे परिणति दुष्ट के, टाली थिरता सार्थीय ।  
 कपायनी हो कसमलता कापी के, वर समता  
 आगधीय ॥ १ ॥

अर्थः—नवमा श्री दामोदर स्वामीना शुद्ध स्या  
 द्वादाशुत रस भरथां वचन सांभली आत्म अनात्म  
 आदि अनंत तत्त्वोनी रुडी प्रतित करी उपयोग  
 धिर करी दामोदर स्वामीने परममादरे खंदीये एटले  
 तेमना वचन अने गुणो अनि सन्माने आदरिषे,  
 जीयने अनादिभी विप्रवास वासना रूप मिथ्या  
 भ्रान्ति छे तेनी विगतः—

जीयमां अर्जाव बुद्धि, अर्जाव गुणपर्यायमां  
 जाव बुद्धि, शुद्धात्म स्वभावधर्ममां अधर्मबुद्धि,  
 अने पुद्गल क्रिया प्रवृत्तिरूप अधर्ममां धर्म बुद्धि  
 शुद्ध तत्त्वना जाण समभार्या गुरु उपर कुगुरु बुद्धि  
 अने जैन तत्त्वना अजाण उत्सृष्ट भार्या स्वर्धंदनाण  
 चालवापाला जैन भेष्यधारी अथवा अन्य भेष्यधारी  
 उपर सुगुरु बुद्धि, केवलज्ञान केवलदर्शन परम-  
 धिरता अमल अनंत पीर्यवंत देव ऊपर अदेव बुद्धि  
 मिथ्याज्ञान मिथ्यादशेन अपलनावंत लब्धिर्थापे  
 श्रीग ऊपर देव बुद्धि, अष्टकर्मर्था मुक्त धयेलाने  
 अमुक्त जाणया अने अष्टकर्म वचन मुक्त रागद्वेष-  
 वंतने अथवा स्मृतवासमां वषायेलाने मुक्त जाणया  
 ए वचने विपरिण अथवा मरणा जाणया तथा न्यो

रूप कृदुंघादि विषयो दातारने मित्र जाणवो अने  
 रम्यकृद्ज्ञान दर्शन चरणात्म र्थार्थना दातारने शत्रु  
 गय जाणवो, विषय रोगना उपचारने सुख जाणवुं  
 प्रने शुद्धात्म संयममाहे दुःख जाणवुं, कारणने  
 मार्ग जाणवुं अने कार्यने कारण जाणवुं, अपवादने  
 त्सर्ग तथा उत्सर्गने अपवाद जाणवो, पुण्य पाप-  
 य शुभाशुभ परिणामने धर्मरूप शुद्ध परिणाम  
 जाणवो तथा शुद्ध भावधर्मने पुण्य पापरूप शुभा-  
 शुभ परिणाम जाणवो, उनमार्गने मार्ग अने शुद्ध-  
 मार्गने उन्मार्ग, आश्रयने संवर अने संवरने आश्रय  
 अने अयंघ अने अयंघने यंघ, अकर्त्ताने कर्ता अने  
 कर्त्ताने अकर्त्ता, अकारणने कारण अने कारणने  
 अकारण, अकार्यने कार्य अने कार्यने अकार्य,  
 अकारकने कारक तथा कारकने अकारक, अप्रमा-  
 नने प्रमाण तथा प्रमाणने अप्रमाण, कुनयने सुनय  
 अने सुनयने कुनय, कुयचनने सुचचन अने सुचचन-  
 कुयचन, समभाषीने विषमभाषी तथा यक्रभा-  
 णने समभाषी, उलटभावने सुलटभाव तथा सुलट-  
 राय ए आदि विपर्यास घासनाना असंख्यात  
 मध्यवसाय ( अभिप्राय ) छे ते सर्वे जडमूलधी

उद्धेदिष्ट. मन धवन कपाय ए त्रये जोगो सदा अवग  
 अने विषय कपायमा प्रवर्तं छे एट्टे ते रातदिन  
 सर्वे समय पंचविषय, पंचस्रवत तथा चारकपाययो  
 नियन्त्रिता नथी एवो दुष्ट एट्टले आरमाने अनंत दुःख  
 आपनारी अघिरति परिणति अनादिथी लागेला  
 छे ते दुष्ट परिणति टाली विषयो अवतादिकर्षा  
 निवृत्ति लेइ शुद्धात्मभावमां परमस्थिरता साधीए.  
 मूल चार कपाय अने कपायना कारणरूप नय  
 नोरूपाय तंथी आत्मसंग अने आत्मगुणा कपाय  
 छे एट्टले शोषाय छे ते कपाय मेलथी उपजना  
 कसमलता के० कल्पना कापी ने यरग्रधान निज  
 आत्म द्रव्य क्षेत्र काल भावमां परमशांति अने  
 परमसमाधि अने परमसंतोषरूप समता सेविण  
 एट्टले परद्रव्यादिकमां अनादिथी आपापणुं मानेहुं  
 छे ते स्वद्रव्य क्षेत्र काल भावमांज आपापणानी  
 युद्धि धाय त्वारेज परम स्थतंत्र शुद्ध शांति  
 तुष्टि धाय ॥ १ ॥

जंबूने हो भरते जिनराज के, नवमा अ-  
 तित चौबीशीये ॥ जस नामे हो प्रागटे गुण

રાસિ કે, ધ્યાને શિવ સુખ વિલસાયે ॥ અપ-  
રાધી હો જે તુજથી દૂર કે, મૂરિ સ્મરણ દુઃસ્વ-  
ના ધણી ॥ તે માટે હો તુજ સેવા રંગ કે,  
હોજો વ ઇચ્છા ઘણી ॥ ૨ ॥

અર્થ:-આ જંબુદ્વીપના દક્ષિણ ભરતમાં અતિત  
વૌશીમાં નવમા દામોદર સ્વામી નામે તીર્થંકર  
ધ્યા તેનું નામ સાંભલતાં અને જેનાં ધ્યન દૃઢધર્મા  
ધારતાં જ્ઞાનાદિક ક્ષાંત્યાદિક અનંત શુદ્ધાત્મગુણ  
જયો ધગટ ધાય અને જેના ધ્યાનથી ઘટલે દામોદર  
સ્વામીજી જે ધ્યાન કરયો અને જે ધ્યાન શિવસુખ  
માટે યત્નાવ્યું તે ધ્યાન આદિયે તો ઉપદ્રવ રહિત  
શાશ્વત સદ્ગુણ પરમાનંદ સુખાધિભાગ પામીએ. તાહરું  
આજ્ઞાથી જે ઘંગલા રહે છે તે તમારા તથા આત્મ-  
શુદ્ધતાના ધ્યન મોક્ષમાર્ગના અપરાધી થઈ ભવભ્રમણ  
કરતા ખારે ધ્યન વેદેરા દુઃસ્વ ભોગધયાના ઘણા  
કાશ્યાં ન માટે મહારું તો તમારી અસ્વંહ આજ્ઞા  
સેવવામાં રંગ રહેજો એજ મારી પરમ જિજ્ઞાસા  
કે ॥ ૨ ॥

मरुधर्मों है जिम सुरतरु लुंयके, सागरमें  
 प्रवहण मयो ॥ भवममतां है भविजन आ-  
 धार के, प्रभु दर्शन सुख अनुपमो ॥ आन-  
 मनी हो जे शक्ति अनंतके, तेह स्वरूप पदं  
 धरथा ॥ परिणामिक हो ज्ञानादिक, धर्म क,  
 स्व स्वकार्यपणे वरथा ॥ ३ ॥

अर्थ:-सागरमें देवता कल्पवृक्षा लुंयो के  
 आन्नवृक्षनां मूलवां मूलवां दुर्लभ तैम आ दुपम  
 काल पांचमा आरामां ताहरां अनंत ज्ञान अनंत  
 न्याय अने परम दयामयी वचन पर्यायोनी लुंयो  
 मलयी घणा लोकोने दुर्लभ जाणवी अने हमने  
 प्रभुस्य पुण्य पसाए प्रभुवचननों लाभ धयो तै  
 आश्चर्य जियुं जाणी चित्तमां आनंद अने उल्लास  
 पामिए छिए. पटले भर समुद्रमां ओलां स्वाताने  
 जेम द्रव प्रवहण थावी मले तैम हमे पण समा  
 समुद्रमां दुपकीयो स्वाताने ताहरा स्यादाद वचन  
 रूप द्रव जहाज थावी मल्यु तै पण परमानंदतुं  
 कारण छे. भवभ्रमण करता भवि जांचोने ताहरो

आधार है अथवा ताहरीं प्ररूपेलां शुद्ध वचन प्ररूप-  
 कनी आधार है पण ताहरीं जे आज्ञाथी उलटा  
 दुर्मतीशोश वचन आधारं वलें छे तेने तो जेमां  
 मिथ्यात अज्ञान अने कपाय रूप खारं पण्ठी भरयो  
 छे एह्या-भवसमुद्रमां प्रत्यक्षपणे दूषता देखीए  
 धीए. ताहरीं आज्ञामां रहेयुं एज ताहरुं दर्शन.  
 तंधी जे सुख पामीए तेने सांसारिक उपचरित सुख-  
 नी उपमा लागीं शके नहीं. प्रभुजी तमे आत्मानी  
 अनंत शक्ति पूर्ण पर्याये स्थस्वरूपपदे धारण करी  
 अने तमे ज्ञानादिक निज आत्म अनंत धर्मना  
 परिणामी धया एटले कारकचक्र जे उलटुं फरतुं  
 हतुं ते पलट्टी सुलट्टयुं एटले ज्ञान दर्शन चरणादिक  
 आत्मीक अनंत गुणां सहज स्वतंत्रताए अन्य कारण  
 बिना अने प्रयास बिना सर्वे समय धमधोकार आप  
 आपणा कार्यमां लाग्या एटले पर परिणामीकतानो  
 अंश भाग पर्यां रहे ? अर्थात् नज रहे ॥ ३ ॥

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण  
 अखंड स्वभावना ॥ निज गुणानो हो जे वर्तन  
 धर्म के सहज बिलासी दावनो ॥ तसा भोगी



हो तुं जिनवर देव के, त्यागी सर्व विभावने  
 भुतज्ञानी हो न कही शके सर्व के, महिमा  
 तुज प्रभावने ॥ ४ ॥

अर्थ:-प्रभुजी अविनाशी अत्यन्तीक स्वतंत्रीक  
 परम अने पूर्ण अखंड आत्मीक स्वभावे मम हो  
 तमारा सर्व स्वगुणों आप आपणा कायेमां सकल  
 समय घत्ते छे ते सहज स्वभाय विज्ञाननों दाव  
 नमारे आप्यों छे. ते शुद्ध भावनाज तमे भोगी छे  
 अने सर्वे विभावना त्यागी छे. आठे कमेने जीती  
 वाप्रधान ज्ञान दर्शन गुणे देदिव्यमान छे. पूर्ण  
 भुतज्ञानी वण तमारा गुणादि प्रभावनों महिमा  
 कहि शके नहीं ॥ ४ ॥

निकामी हो निकपाई नाथके, साध हो  
 जो नित तुम तणो ॥ तुम आणा हो आरा  
 धन शुद्धके, साधुं हुं साधकपणो ॥ वीतराग  
 र्थी हो जे राग विशुद्धके, तहीम भवभय  
 वारणो ॥ जिनचंद्रनी हो जे भाक्ति एकत्वके  
 देवेंवर पद करणो ॥ ५ ॥

अर्थ:-प्रभुजीकोईपण पुद्गल वस्तुना कामी नहीं  
 ऐसे कयाप तो शानो होय ? अर्थात् नज होय.  
 भुजीनो साथ पटले प्रभुजी प्रमाणे हमे पण पर-  
 व कामना रहित अने कयाप रहित सदा रहिय  
 हयो सदा हमारे साथ होजो अथवा सिद्धक्षेत्रमा  
 मारे ममारो नित्य स्थिर साथ होजो. हमने शिव-  
 गीमां प्रेरनारा घाटे अमारा नाथ अने प्रभुजी  
 मने कही गया के शुद्ध सिद्धमा आषो तेज तमारां  
 यन सफल धजो. ए घाटे तमारी शुद्ध आणा,  
 गारापी शुद्ध साधकपणो भापी आत्मसिद्धता पांछुं  
 ताराग देयपी इहलोकादि इच्छा रहित विशुद्ध  
 ग तेज भयभयपी ठोडावनारो छे. एहवा सामा-  
 यजिनोमां चंद्रमा समान तार्थकर देयनी भक्ति  
 कल्पपणुं तेज देयमां चंद्रमा समान सिद्धिप-  
 तारण जाण्युं ॥ ५ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ दशम भी सुतेज जिन स्तवन ।

अति रुडीरे (२) जिनजीनी ।

रुडी ॥ ए आंकडा ॥

हो तुं जिनपर देव के, त्यागी सर्व विमानो  
पुतज्ञानी हो न कहो शके सर्व के, महिमा  
तुज प्रमाणो ॥ ४ ॥

अर्थ.-सबजी अविनाशी अर्थात्सर्व स्वरूपी  
परम अने पूर्ण अर्थात् आरधीक स्वभावो सब हो  
नमारा सर्व स्वगुणो आन आनना कानेमां सब  
ममय परे से से सदस्य स्वभाव विनासनां श  
नमारे आण्यो से, से शुद्ध भावनाज तमे योगी स  
धने सर्व विभावना त्यागी छो, आटे कमेने जी  
वाप्रधान ज्ञान दरान गुणो देदिप्यमान छो, ए  
भुतज्ञानी पण तमारा गुणादि वभावनां महि  
कहि शके नहीं ॥ ४ ॥

निकामी हो निकपाई नाथके, साथ है  
जो नित तुम तणो ॥ तुम आणा हो आरा  
धन शुद्धके, भाधुं हुं साधकपणो ॥ यातराग  
थी हो जे नाग विशुद्धके, तेहीम भवभा  
वारणो ॥ जिनचंद्रनी हो जे भाक्ति एकत्वो  
देवेंवर पद करणो ॥ ५ ॥



सकल प्रदेश अनंती, गुण पर्याय शक्ति  
महंती लाल ॥ अ० ॥ तसु रमणे अनुभववती,  
पर रमणे जे न रमंतो लाल ॥ अति० ॥१॥

अर्थः—दशमा श्री सुतेज स्वामीनी श्रुद्धात्म  
स्वभाषमां स्वतन्त्रमाए अकंपना निश्चलना निरा-  
कुलाना रूप परम धिरता अति रुही सांझानपी छे.  
सर्वे प्रदेशे सर्वे गुणोना पूर्ण पर्यायनी अनंत महंत  
सत्ता परम अचल धीर्यपयो सर्वे समकाले सकल  
स्वकार्यपणे धर्मावा धर्मा पण विरथो म छे. ते ज्ञाना-  
दिक स्वगुण अनंत पर्यायमां प्रभुर्जानुं रमण तेधी  
अनुभवयंती के० ते सर्वे शक्ति सकल समय अनु-  
भव युक्त छे पण पुटुगलादिक परगुणने अनुभवती  
भोगयता नधी पटुले परगुणमां रमती नधी देमने  
चेतनामां स्वगुण भोग स्वप्रदेशे अस्तिरूपणे छे  
अने अन्यदेशे परगुण भोगनो स्वप्रदेशे अभाष  
तेधी स्वप्रदेशे परगुण भोगनुं नास्तिरूप छे ॥ १ ॥

उत्पाद व्यये पलटंती, ध्रुव शक्ति श्रीपदी  
संतो लाल ॥ अ० उत्पादे उत्पत्तमंती, पूरव  
परिणति व्ययपंती लाल ॥ अ० ॥ २ ॥

અર્થ:-શક્તિ ઉત્પાદુ વ્યવપણે પલટે છે તે જતાં  
 ધ્રુવ છે. શક્તિ તે ઉત્પાદુ વ્યવ ધ્રુવ એમ શ્રીપદી  
 રૂત હોય જો ઉત્પાદુ ન હોય તો નવા નવા  
 તથા નવા નવા પર્યાય ઘટ્ટતાપ આપે તેનું જાણવા  
 પર્યાયિ કાર્ય થાય નહીં, અને વ્યવ ન હોય તો  
 શિતકાલ પ્રવૃત્તિનું જાણવા દેખવાદિ કાર્ય ઘટ્ટ-  
 તપણે જણાય પણ અતીતપણે ન જણાય ઘટ્ટી  
 ધ્રુવ ન હોય તો પર્યાયનો ઉત્પાદુ વ્યવ ધર્તા  
 પના ઘટ્ટી પર્યાયની સરાનો નાશ થાય પણ  
 યના ઘટ્ટી પર્યાયનોજ આધીર્ભાવપણે અને તિરો-  
 વપણે તથા ઘટ્ટીપણે અને સામર્થ્યપણે તથા  
 રુ ઘટ્ટીની હાથીવૃદ્ધિપણે ં આદિ અનેક પ્રશારે  
 ગદુ વ્યવ ધર્તા કરે છે પણ સત્તા તો સદા  
 ભાવપણે ધ્રુવ રહે છે તેજ માટે પ્રથોમા  
 ય છે કે:- „ઉત્પાદુ વ્યવ ધ્રુવ યુક્ત સત્ લક્ષણ  
 વ્ય ,, પટલે ઉત્પાદુ વ્યવ અને ધ્રુવ તેજ દ્રવ્યનું  
 ૧ લક્ષણ છે. સત્ લક્ષણ વિના દ્રવ્યની સત્તા  
 ને કહિયે ? જેમ સોનાની સત્તા ઘટે મુકટ આદિ  
 ય પર્યાયનો ઉત્પાદુ થાય છે અને કુંડલ આદિ  
 પર્યાયનો વ્યવ થાય છે અને મુકટ કુંડલ આદિ

अनेक पर्याय रूप कार्य धवानी ससा सुवर्ग इ  
 यमां ध्रुवपणे रहे छे ए प्रमाथो उत्पादु व्यप  
 जाणयो. जो एम न होय तो द्रव्यनुं द्रव्यपणुं  
 नहों. छती पर्यायोनों जनक द्रव्य छे एटले  
 पर्यायोने आधीभायपणे द्रव्य जन्म आपे छे (उ  
 जाये छे) एटले एक समपनुं कार्य करी तेज  
 पर्यायोने पोतामां तिरोभायपणे समावे छे (द्वे  
 एटले पर्यायोने आधीभाय अने तिरोभायपणे  
 जाययुं अने राव्ययुं तेज द्रव्यनुं द्रव्यस्थपणुं  
 ताहरी धिरता नछे पर्याये उत्पत्तीधन छे अने  
 पर्याये व्ययधन छे एटले परिणतिमां परायर्तन  
 छे तेथी पूर्व पूर्य परिणति व्यय धरं तथा तथा म  
 नयि नबि परिणतिः परिणम्या करे एमज  
 समघ मत्ता उत्पादु व्यप ध्रुव धर्या करे एटले  
 समघ उत्पादुनां पण नाश नथी व्ययनो पण  
 नथी अने ध्रुवनानो पण नाश नथी माटे अणो  
 पण स्वभाद अन्नायमान नथी पण धिर छे  
 धिरताज पूर्व परिणति रूपयां पलटां नयि परि  
 रूप उपजे छे अने मत्ताए ध्रुवज छे. माटे धिर  
 उत्पादु व्यप ध्रुव जाययो एम तमाहं स्वरूप

॥ अर्च्यकारी छे ॥ २ ॥

नव नव उपयोगे नवटी, गुण छतिपी ते  
 नेत अचली लाल ॥ अ० ॥ परद्रव्ये जे नवि  
 मणी, क्षेत्रांतरमांही न रमणी लाल ॥ अ० ॥ ३ ॥

अर्थ:-एज धिरता नवे समये नचा उपयोगे  
 प अथवा नवि परिणतिप परिणमे माटे नवि  
 हेप पण एज सत्ता गुणद्धतीपये नित्य अने  
 वल कहीप एज धिर सत्ता कोई काले पण स्व-  
 र छोडीने परक्षेत्र कदापि जाय नहीं अने परक्षेत्रे  
 परगुण पर्यापमां रमे नहीं पण स्थिरपणे स्व-  
 र रहि स्वकाले स्वभाषीक अनंत पर्यापमां रमे.  
 र लूणनी स्वाराश लूणना स्वप्रदेश छोडीने अन्य  
 प क्षेत्रे जाय नहि तेम जाययुं ॥ ३ ॥

अतिशय योगे नवि दीपे, परभाव भणी  
 व दीपे लाल ॥ अ० ॥ निज तत्त्व रसे जे  
 नी, वाज किणही नवि कीनी लाल  
 ० ॥ ४ ॥



अर्थः-ताहरी शुद्ध अग्ने पिर सत्ता ते स्वयमा  
 वेज रेदिण्यमान के एटले दीपती दीपानती के ज  
 अतिराय योगे एटले कोई शुद्धगत्त अतिराय म्म व  
 योगे दीपती नथी. बली पर भायना योगे एटा  
 पण रहेती नथी जेम शाकमां गणी जातनो ममालो  
 नांभीए सेमां मूणनी नाराय पर योगे बानी रहेती  
 नथी पण पोतानी व्यक्ति रेणाटेज के तेम प्रभुजीनी  
 धिर सत्ता परयोगे पण हुयो रहेती नथी ते सत्ता  
 शुद्धात्म तत्त्वमां सपलीन के शुद्धात्म तत्त्वयी मद्  
 अमेद के जूदो पहती नथी. सेननादिक द्रव्यना  
 अनंत लक्षणनी स्थिरता भेई अन्य पुरुष प्राणादिक  
 करेली नथी तेम कोई शकरादिक अन्य पुरुष विना  
 करया समर्थ नथी बली विष्णु आदि अन्य पुरु  
 तमारी सत्ताने राखी शके तेम नथी पण तमार  
 धिर सत्ताना रक्षक ग्राहक व्यापक अने कर्ता  
 भोक्तादि तमे पोतेज छे एटले कोईनी सत्तान  
 कोई अन्य द्रव्य ग्राहक व्यापक रक्षक कर्ता भोक्ता  
 दि नथी. एम सम्पक् प्रकारे सत्तानी स्थिरते  
 जाणवी ॥ ४ ॥

संप्रह नयथी जे अनादि, पण एंवभूते

सादि लाल ॥ अ० ॥ जेहने बहुमाने प्राणी,  
 वामे निज गुण सहनाणी लाल ॥ अ० ॥ ५॥

अर्थ:-संग्रह नयथी सत्ता अनादिथी शुद्ध अने,  
 धीर वं पक्ष ज्यारे शुद्ध धीरता प्रगट थई त्यारे तें,  
 एवंमूतनयथी सादि कहिए. तें धीर शुद्ध सत्तांतु,  
 बहुमान जे भयि करे ते पोतानी धीर अने शुद्ध,  
 सत्तांतु अहिठाण ( स्थानक ) वामे पटले प्रमुजीनी,  
 शुद्ध सत्ता ज्यारो भवि पोतानी शुद्ध सत्ता,  
 स्थानक वामे ॥ ५ ॥

धिरताथी धिरता वाधे, साधक निज प्रभुता  
 साधे ॥ लाल ॥ अ० ॥ प्रभु गुणने रंगे रमता,  
 ते वामे अविचल समता ॥ लाल ॥ अ० ॥ ६॥

अर्थ:-शुद्ध सत्तामां अंतरमुहूर्त मात्र उपयोग  
 धीर करिए तो तें सादिअनंत शुद्ध सत्तामां धीरता-  
 न्तुं कारण थाय जे. जेम घहुंना बीजथी घहुंनी वृद्धि  
 थाय वली अग्नि अंशथी महा अग्नि प्रगटं थाय तेम  
 कर्मबीजथी कर्मनी वृद्धि अने राग बीजथी रागनी  
 वृद्धि, ज्ञान अंशथी ज्ञाननी वृद्धि अने दर्शन अंशथी

दर्शन वृद्धि अने तेमजगिरताए धीरता अंश पधार-  
दाधी परम धीरता पायीए. माटे आत्मरहित पडे  
अशुद्धताना अंश नाश करवा अने शुद्धताना अंशभी  
पूर्ण शुद्धता पधारी परम शुद्ध धीरता प्रगट करी  
परम धीरमाना अनंत परमानंद विलासी भयु ए  
उपदेश छे. एमज मोक्षाभिलाषी जीव साधकपणु  
आदरो योगानी परम शुद्ध धीरतानी प्रभुता साधे  
एम जिनेश्वरनां परम शुद्ध धीर गुणोमां योगानी  
परिणति समाधवाघालो अखिल शुद्ध धीर समा  
पायी परम सिद्धता पाये ॥ ६ ॥

निज तजे जेह सुतेजा, जे सेवे धरि बहु  
हेजा लाल ॥ अ० ॥ शुद्धालवन जे प्रभु  
ध्याये, ते देवचंद्र पद पावे लाल ॥ अ० ॥ ७ ॥

अर्थ:-प्रभुजी योगाने तेजे करी परम तेजवंत  
छे एहपा प्रभुने जे बहु हितधारी पूर्ण प्रेम प्रतिते  
सेये अने शुद्ध आलवन प्रभुने जे ध्याय ते देवमा  
चंद्रमा समान परमात्म पद पाये ॥ ७ ॥

। अथ एकादशमं श्री स्वामीप्रभुजिन स्तवन ॥

रही रहो रहो रहो बाखदां ॥ ए देशी ॥

नामि नामि नामि नामि वीनवुं, सुगुणां स्वामी  
 जिणंद नाथरे ॥ ज्ञेय सकल जाणग तुमे,  
 प्रभुजी ज्ञान जिणंद नाथरे ॥ नामि० ॥ १ ॥

अर्थ:-हूँ निज शुद्ध, गुण विरह आतुरताए  
 मोक्षाभिलाषी थई चारंपार श्री सुगुणवान् स्वामी-  
 मसु नामा अगीमोरमा तीथंकरने नाम स्थापना  
 द्रव्य अने भाव एम चारे निक्षेपे तथा द्रव्य क्षेत्र  
 काल अने भाव तथा मन ध्वन का अने शुद्ध  
 उपयोग परिणामे नमस्कार करीने एटले पर द्रव्यमा  
 ग्रहणालु तथा माहरी बुद्धिनु अंभिमान छोडी  
 अरज करुं हूँ के प्रभुजी तंमे तो अनंत शुद्धात्म  
 गुणं पर्यायनां स्वामी हो तेषी परम पुरुष हो अने  
 स्वपर श्रीकालवर्ती अनंत क्षेपना जाणग पांसंग  
 हो तेषी ज्ञान दर्शन रूप सूर्य हो ॥ १ ॥

वर्त्तमान ए जीवनी, एहवी परिणति केम  
 नाथरे ॥ जाणुं हेय विभावने, पिण नावे छटे  
 प्रेम नाथरे ॥ नामि० ॥ २ ॥

अर्थ:-हे नाथ ! वर्त्तमान माहारा सरखा

नी एहवी परिणति केम ? हुं जोगं तु के विभाव  
महा अपाय, दुःखदाता, भयघ्नमण अने परतंत्रता  
वधारनार अने ज्ञान दर्शनादि अने आत्म गुणोनी  
हाणी करनार घाटे हेय-तजया लायक जे जता  
पण ए उपरधी प्रेम केम घटतांनधीः? ॥ २ ॥

पर परिणति रस रंगता, पर ग्राहकता  
भाव नाथरे ॥ पर करता पर भोगता, इयो  
ययो एह स्वभाव नाथरे ॥ नमि० ॥ ३ ॥

अर्थ:-अधिर परतंत्र अने जगत् जीवोनी एंड  
आपणी ईच्छाप बत्ते पण नहीं, आपणी ईच्छाए  
रहे पण नहीं बली अनेक प्रकारे बपेलता कराव-  
नारी एहवी निंदया लायक पुद्गल परिणतिमां  
चित्त रीकें, जे रस लागे जे बली ते परपरिणतिने  
ग्रहण करवानो बली ते मांहे चित्तने व्यापवानो  
तथा तेने संग्रह करवानो तथा तेने भोगववानो  
तथा तेने निपजाववा आदि हमारो भाव केम थयो  
केम थाय जे ? ॥ ३ ॥

विषय कषाय, अशुद्धता, न घटे एं बिर-

घार नाथरे । तौ पण वंडू तेहने, किम तरिप  
संसार नाथरे ॥ नामि० ॥ ४ ॥

अर्थ:-यली विपयो अने कपायो आत्म अंगने,  
आत्म गुणोने अशुद्ध कथायाला ते माहरे अंश-  
मात्र आदरया न घटे तो गुं सुख जाणी आदरीए ?  
वली कपारे ए दुःख देना जधी के आदरीए ? तो  
ए आदरया न घटे ए निरधार छे तो पण माहारा  
जाला तेने ईच्छे छे तो संसारथी केम तरिप ? ॥४॥

मिथ्या अविरति प्रमुखने, नियमा जाणुं  
दोष नाथरे ॥ नंदू गरहूं वली वली, पण ते  
पामे संतोष नाथर ॥ नामि० ॥ ५ ॥

अर्थ:-यली अज्ञान मिथ्यात्व अविरति प्रमाद  
कपाय अने पुढगल योग ते निश्चय दोष के० दुःख-  
दाता जाणुं छुं तेथी तेने नंदु छुं अने यली गुरु  
समके विशेषे नंदु छुं एम छतां पण एहवा दुःख-  
दाई परिणामां राखी संतोष मानुं छुं ए केवी  
मूल छे ? ॥ ५ ॥

अंतरंग पर रक्षणता, टलश्ये किश्ये उपाय

नाथरे ॥ अण आराधन विना, किम गुण  
 बोद्धे थाय नाथरे ॥ नमि० ॥ ६ ॥

अर्थ:-ए आदि अनेक प्रकारनुं अंतरंग पर  
 रमण ने कथा प्रकारे टलझे ? अने ए अंतरंग पर  
 रमण जे न छोडे ने ताहरी आज्ञा अने साक्षमार्गने  
 आराधकन थाय अने आणा आराधन विना ज्ञाना-  
 दिक शुद्धात्म गुणोनी मिद्धि केम थाय ! ॥ ६ ॥

हवे जिन वचन प्रसंगधी, जाणी साधक  
 नीति नाथरे ॥ शुद्ध साध्य शचीपणे, करिय  
 साधन गति नाथरे ॥ न० ॥ ७ ॥

अर्थ:-हवे प्रमुखतः प्रसंग धर्यो तेथी साधकना  
 नीति के० न्याय जाण्यो तेथी शुद्ध साध्य रूपिणे  
 साधनरानिण पर्यायिण गृहले ज्ञान गुणे करीने शुद्ध  
 साध्य जाण्यो, दर्शनगुणे करीने शुद्ध साध्य निदृश्य  
 करिण-देशीण, चरणगुणे करी शुद्ध साध्य आधरण  
 निधीण अने बायेंगुणे करीने शुद्ध साधकनामा यत्न  
 कोशीण, धारणी शुद्ध साध्यमा अने शुद्ध साध्य  
 दर्शयवारात्ममा करीण, मरुत पर कामदा तजी

शुद्ध साध्य सिद्ध करवाना कामी धरिए, सुखनी  
 बाणा भने भ्वास शुद्ध साध्य सिद्धिमांज राखीए,  
 शुद्ध साध्य सिद्धि बिना सुख नथी एम प्रतित  
 करीए, शुद्ध साध्य सिद्धिअन्य वस्तुधी प्रेम छांटी  
 शुद्ध साध्यमांज प्रेम राखीए, बुद्धि मन पचन काया  
 ए सधैं शुद्ध साध्य सिद्ध करवानां राखीए. वापरीए  
 एम अंगरंग अनेक परपद रमण छे ते छांटी शुद्ध  
 साध्य महि रंगे चित्त रमाधीए तांज ए अनादि  
 कालनां दुष्ट विभाष शत्रु नाश पामे. काचे भगोसे  
 सहज शत्रु एण पाछां हटतो नथी तो अनादि  
 कालनां मोह शत्रु सहजे केम पाछां हटे ? तां वि-  
 भाष नाश करवामां पूरे पूरे, पुरुष पराक्रम कोरधीए  
 एण पानांनु पराक्रम शत्रुघ्नाना तावे करिए : ६१  
 अने विभाष नाश करवामांज वापरीए तो कर्म-  
 शत्रुगी जग धरिए ॥ ७ ॥

भावन भ्रमण प्रभु गुणे, योग गुणी आ-  
 धीन नाथरे ॥ राग ते जिन गुण रंगमें, प्रभु  
 दीटां गति पीन नाथरे ॥ नमि० ॥ ८ ॥

अर्थः-वाद्दृष्टनी भाषना छांटी प्रभुना शुद्ध



आत्मता पलटावतां, प्रगटे संवर रूप  
नाथरे ॥ स्वस्वरूप रसी करे, पुरणानंद अनू  
नाथरे ॥ नामि० ॥ ११ ॥

अर्थ:-पर परिणतिमां आत्मता मानी हे ते  
भेदज्ञाने स्वपर लक्षण भिन्न जाणी स्वद्रव्यादिकमां  
आत्मता मानिए. स्वद्रव्यादिकमां कारण कारक  
कार्य जाणवे मानवे आदरवे आश्रय नाश धर्म  
संवर रूप प्रगटे, जे जीव शुद्ध सिद्ध मम स्वरूप  
रसीयां धर्यां ते स्वरूप रसी पूर्ण अनंत प्रभुपद  
आनंद प्रगट करे ॥ ११ ॥

विषय कषाय हर टले, अमृत थाये एम  
नाथरे ॥ जे प्रसिद्ध रुची हुवे, तो प्रभु सेवा  
धर्यां प्रेम नाथरं ॥ नामि० ॥ १२ ॥

अर्थ:-एम विषय कषाय रूप हर के० जेव टली  
अमृत थाय अथवा विषय कषाय रूप हर के०  
धर्यां-हेय टली संवर रूप अमृत प्रगट थाय, जे  
प्रसिद्धपणे शुद्ध माध्य सिद्ध करवा रुचिधन होय  
तीर्थकरोनी आशा संघयामां प्रेम प्रतीत राखे। १२

कारणं रंगी कार्यने, साधे अवसर पाप्मि  
 साधरे ॥ देवचंद्र जिनराजनी, सेवा शिवसुख  
 नाम नायरे ॥ नामि० ॥ १३ ॥

अर्थः—आत्म सिद्धिना कारण परमेश्वरना पश्य  
 मां जेने रंग लाग्यो ते अवसर पाप्मि अवश्य कार्य  
 नद करी. देवोमां चंद्रमा समान देवाधिदेव रयामी-  
 सुनी आपानुं सेवनते शिवसुखनुं स्थानक छे। १३।

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ द्वादशम श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन ॥

॥ नमणी भ्रमणी ने मन गमणी ॥ ए देयी ॥

दिठो दरिण श्री प्रभुर्जानो, सावे रागे  
मनसुं भीनो जसु रागे निरागी थाये, तेहनी  
भक्ति कोने न सुहाये ॥ १ ॥

अर्थ:-केवलज्ञान दर्शनादि अनंत लक्ष्मीवंत  
अनेक शुद्ध प्रभुगाना घणो मुनिसुव्रत स्वामी नामा  
नारमा तोर्थकरने दर्शन दिहुं कें० प्रभुए जीवादि नव  
पदधांदि अनेक शुद्ध तत्वां दर्शाव्या जे ते जेने दर्शनां  
सुण्या प्रमात भइ तेने दर्शन थयु कर्हीए. ए दर्शन  
जेने थयु तेप्रभु गुणांमां साचा रागे मनधी भानो  
जेने रागे वानराग पद पार्याए तेनी भक्ति कोने न  
रागे । अक्षयत् शुद्ध पुण्योने तो प्रभु आया भक्ति  
गमेन वग प्रभु आशाना कर्तथा जे अजाण छे ते ते  
सुदृशनामां . मुंकार् रक्षां देयनः "नाकार्हेतु गुणैरु  
अरिहंनार्हेतु धम्म स्वेतु ॥ धम्मोपारख साहम्मी  
एतु धम्मर्थं जो व गुण रागो ॥ मां सुपमवो रागे  
धम्म संयोग कारथो गुणदो ॥ पदम कापवो सो  
एत गुणं नवई तं मणं" ॥ १ ॥

पुद्गल आशा रागी अनेग, तसुं पासे  
कुण खाये फेग ॥ जसु भगते निर्भय पद  
लहिए, तेहनी सेवामां धिर रहिये ॥ २ ॥

अर्थ:-जे देवपणा विना देव अने गुरुपणा विना  
गुरु कहवाग छे अने पुद्गल परिणतिना भीखारी  
एवा अन्य जीवोनी अने पुद्गल परिणतिनी आशा  
राखे छे तो ते भीखारी पामे भीख मांगनारा तेनी  
पासे हमेशा वास्ने ? कयंसुख ? अने कयो गुण लेवा  
फेरा खाईए ? जेनी भक्तिए निर्भय निराकुल शुद्ध  
स्वतंत्र शिष्य पद पामाए तेज बीतरागनी आशा  
सेवामां धिर रहिए. तेमनी आशा अने सेवार्था  
बलापमान थई पहिरात्म भावमां न जईए ॥ २ ॥

: रागी सेवकथी जे गाचे, बाह्य भक्ति देखी  
ने माचे ॥ जसु गुण झेले तृप्णा आंचे, तेहनी  
सुजस चतुर किम वाचे ॥ ३ ॥

अर्थ:-रागी ज्ञातां देव तथा गुरूं कहेवाता  
एहवा देव तथा गुरू पीताना सेवकांनी बाह्य भक्ति  
देखीने तेउं उपर खुशी घाय जे, माचे छे, मग पाप-

हैं पण ते कहेवाता देव तथा गुरूना ज्ञानादि  
 क्षांत्यादि गुण रूप घन ते भोग तृण्णाआंने दाझे  
 छे तेनो जम चतुर पुरुषो केम बोले ? जे पोतेज  
 आत्म घन हीण छे ते पोजा भव्य पुरुषोने आत्म  
 घने घनवंत केम करी शके ? अर्थात् नज करी शके  
 माटे माहरे तो अर्चित्य आत्मीक घननो दातार  
 प्रभुं तेज एक छे ॥ ३ ॥

पूरण ब्रह्मने पूर्णानंदी, दर्शन ज्ञान चरण  
 रस फंदी सकल विभाव प्रसंग अफंदी, तेह  
 देव समरस मकरंदी ॥ ४ ॥

अर्थ:-प्रभु भदार हजार भेदे अव्रतंय सर्जा  
 पूर्ण शुद्ध ब्रह्म रूप सिद्ध पद पाप्मा छो तेथी अनंत  
 स्वतंत्र पर्याये परम पूर्ण आनंद भोगी छो अने दर्शन  
 ज्ञान चरणानंद स्वादना मूल छो अने सकल विभाव  
 प्रसंगथी फंद रहित अफंदी छो माटे हे देव ! तमेज  
 पूर्ण समभाव घडे ज्ञानादि स्वगुणनो रस स्वाद  
 लेयायाळा छो ॥ ४ ॥

तेदना भक्ति भवभय भीजे, निगुण पिण  
 गुण शाकि गाजे दास भाव प्रभुताने आपे,

अंतरंग कालिमल सवि कपे ॥ ५ ॥

अर्थ:-पहया देवनी भक्ति भय भयनी कागया-  
वाली छे. निश्चयधी प्रभु कोई अन्य द्रव्यने गुण  
दोष करता नथी पण व्यवहार नयधी शुद्ध नये  
देवना चाचो अनेक भवि जीवने मंमार समुद्रां  
पार उतारें छे अने सम्यक्ज्ञान दर्शन चारित्र्य आपे  
छे एम अनेक भविने गुण करे छेतेथी गुण करायनी  
शक्तिप करी गाजे छे. पहया प्रभुनी आज्ञा सेवया  
रूप दास भाव जे आदरे ते स्वतंत्र आरम शुद्धता  
रूप अनंत प्रभुता पामे अने अंतरंगमां रक्षो जे  
कल्पता उपजावनार अज्ञान मिथ्यात्य अने कया-  
यादि विभावता रूप मेल तेने कापे ॥ ५ ॥

अप्यातम सुख कारण पुरो, स्वस्वभाव  
अनुमृति सनूगे । तसु गुण धलभी चेतना  
कीजे, परम महोदय शुद्ध लही जे ॥ ६ ॥

अर्थ:-श्री मुनिसुमत स्वामी आरम अधिकार  
राज्य सुख प्राप्तितुं पूर्ण पुष्ट कारण छे. शुद्ध आरम  
स्वरूप अणजागता जीव पोतानो आत्मोक अधि-  
कार जाणे नहीं तेथी शुद्धमल द्रव्य पर्यायने पोते

अपने पोटाना जानी मानी तेना अधिकारी पोने पर्य  
 अगिर अने परंतंत्र पुद्गलानुं कर्ता भोक्ता घाहक  
 एवापरु रक्षकपणुं पोताना मानी नेटा छे. ते पुद्गलो  
 आपणा राह्या रहे नहीं, कर्ता भाव नहीं बली  
 पर क्षेत्री पदार्थों भोगयो शक्याय नहीं बली लेराय  
 नहीं एम अणुहांतुं पाप नहि तेथी तेमां लेद करी  
 करी तेना विनाशो पोतानो विनाश आदि विपर्गाम  
 घामना पर्य रहि छे तेथी जन्म मरणादिक अनंत  
 दुःख भोगये छे पण उपारे प्रभु यजने आत्मा पोता-  
 नो आत्मीक अधिकार जाणे त्पारेज सकल वलेशयो  
 मुक्त पाप अने आत्मअधिकारनुं अत्यंतीक स्वतंत्र  
 सहज सुख पाये. तो ते अत्वात्मीक सुखना दाता  
 ता प्रभु अने प्रभु आणाना शुद्ध प्रेरक छे ते सिषाय  
 अन्य कोई नहीं माटे परम अने पूर्ण उपकारी प्रभु-  
 जी तमे न छो. जेम कोई पुरुष परघर परवस्तु पर  
 स्त्री आदिकनो अधिकारी नहीं अन परघर स्त्री  
 वस्तु आदिकनो अधिकारी पोताने मानी ते परवस्तु  
 ने आदरे तो ते सुखी पाप नहीं अने दुःखी पाप  
 पण उपारे पोतानी घर स्त्री आदि वस्तुनो अधिकारी  
 पोताने जाणे माने आदरे त्पारेज दुःख मटे अने  
 सुख पाप तेम आत्मा अन्य वस्तुनो अधिकारी

ही कर्ता होताजे अन्य वस्तुनो अधिकारी जाणी  
 नी आदरे तो ते दुःखी रहे पण सुखी पाय नहीं.  
 पारं पोतानो अधिकार जेयो ते तेहघो जाणी मानी  
 दरे तोज सकल दुःखी धी निवर्ती अने परमा-  
 नी प्राप्ति पाय अने प्रभुजी तो निज ज्ञानादि  
 दिना अनुभव भोगमां सदा कृत-मग्न हो महा  
 मजबूत हो. आपणी चेतना प्रभुना ज्ञानादिक नि-  
 मल गुणें बलानी राखीए एतले ज्ञानबनना प्रगट  
 पाय. चेतना अनादिधीं कर्मफलपेननापणे अने कर्म-  
 पेननापणे परिणमेली बलगेली हे. ज्यांशुधी चेतना  
 कर्मफलपेननापणे एतले उदय थाबला शुभाशुभ  
 कर्म फलमां सागक्षेपवले परिणमे घेतथा योग क्रिया  
 नवर्तीधीज शुभ उपजे ते शुभ जाणी क्रिया परिव्या-  
 ममां कर्मपेनना पणे कर्मों से त्याशुधी स्वस्वर ज्ञानमां  
 सागनी बलमां मधे पण ज्यां प्रभुना परम नि-  
 मल ज्ञानादि गुणें बलगे त्यां शुद्धात्म स्वभावमां  
 आर्षद जाणी शुद्धात्म स्वभावमां धिर रहेबा ज्ञान-  
 पेननापणे परिणमे. माटे आपणी चेतना प्रभु गुणें  
 रक्षीधी बनीए एतलेज शुद्ध स्वगुण रशीं पाय. परम  
 परम मांसेदय हे० हेबलजांमादि अनेन स्वगुण जि-



मेल पूर्ण व्यक्ति पामीए ॥ ६ ॥

मुनिसुव्रत प्रभु प्रभुता लीना, आत  
संपत्ति भासन पीना ॥ आणा रंगे चित्त धि  
जे, देवचंद्र पद शीघ्र वरीजे ॥ ७ ॥

अर्थ:-जे जीव मुनिसुव्रत स्यामीनी पूर्ण प्रभु  
जाणी आश्चर्य पाव्या के अहो ! प्रभुर्जानुं परमज्ञ  
परमदर्शन परम धिरताए शुद्ध स्वपर्याय रम्यम  
रंमऽ अने परम अचल स्वतंत्र अबाधित बी  
एम अनंत गुणोनी शुद्धतानो परमानंद जाणी चि  
लीन धरुं मेनेज निजात्म शुद्ध संपदानुं पुष्ट भास  
धरुं. ए माटे तीर्थकरोनी आज्ञामां रंगे चित्त धि  
करीए तोज देवचंद्र मुनि करे के के शुद्धात्म  
उताबलुं पामीए ॥ ७ ॥ ॥ संपूणे

॥ अथ त्रयोदशम श्री सुमतिजिन स्तवन ।

॥ कान्हेपालाल ए देखी ॥

प्रभुस्युं इस्युं विनवुरे लाल, मुज विभा  
दुःख रीतेरे साहबियालाल । तीन कालन  
क्षेयनीरे लाल, जाणो छो सहुनीतिरे साह

ब्यालाल ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

अर्थ:-तेरमा श्री सुमति जिन प्रभुधी हुं एवी  
 अरज करुं हुं के में ताहरां वचन जाणया आदर्षा  
 रहेलां पुदुगलोमां आपापणुं मानी महा विभाव द्रढ  
 परिणाम पांध्यां ते परिणामो नो वग ताहरां वचन  
 जाणया क्षतां आजसुधी मदतो नयीं अने तंपी  
 अज्ञान मिथ्यास्व अने कथायादिधी परतंत्रता धिगेरे  
 बहु दुःख भोगहुं हुं ते माहरोज आदरेलो विभावं  
 दुःख प्राप्त आप्यां करे छे अने हे साहेब ! तमे तों  
 सकल द्रव्यनी त्रिकाल परिणतिनी नीति जाणो छों  
 एदले पंचास्तिकाय अने काळ सकलज्ञेयनी नीति  
 अने रीति जाणो छो ॥ १ ॥

ज्ञेय ज्ञानस्युं नवि मिलेरे लाल, ज्ञान न  
 जाये ए तय्यरे ॥ सा० ॥ प्राप्त अप्राप्तमेयनेरे  
 लाल, जाणो जे जिन जय्यरे ॥ सा० ॥  
 प्रभु० ॥ २ ॥

अर्थ:-जे जे द्रव्यना जे जे स्वभाव अने जेटलां  
 जेटला गुणपर्याय होय ते तेमज रहे वही पर्याय  
 क्रमवर्तीए उदेंताए आवे वही तेनुं भवितव्य जेम

હોય તેમ ધાગ અને ઉગમ પણ અવિગળ ધમાત્રે  
 થત્રે અને જે જે કાલે જે જે યોગ સંભવ છે તે તેમ  
 ધને વ્યવસ્થા સમયાગ મળ્યાં કાર્યે ધાગ વ્ધી કાર્ય  
 સંકા નથી. વ્ધીથી કોઈ પણ વ્ધીતતા તે મિથ્યા  
 છે. જ્ઞેય જ્ઞાન સાથે મળી વ્ધીતતા માગ નહીં, જ્ઞાન  
 જ્ઞેય ક્ષેત્રે જાય નહીં અને જ્ઞેયવળ જ્ઞાન ક્ષેત્રે આવે  
 નહીં જેમ, દર્પણમાં જે વ્ધાર્થો ધાસે છે તે વ્ધાર્થો  
 દર્પણ સાથે વ્ધીતતા થઈ જતા નથી, દર્પણ દર્પણ રૂપે  
 અને વ્ધાર્થ વ્ધાર્થ રૂપે રહે છે તેમ જ્ઞાન જ્ઞાન રૂપે  
 અને જ્ઞેય જ્ઞેય રૂપે રહે છે વ્ધી મળ્યાં છે. પ્રશુજી તમે  
 દૂર આકાશ ક્ષેત્રે રહ્યા અપ્રાપ્તમેય જ્ઞેયને અને વ્ધી  
 આકાશ ક્ષેત્રે રહ્યા સ્થવર પ્રાપ્તમેય જ્ઞેયને તથા  
 ધર્ષમાન કાલે ધર્ષનતા પ્રાપ્ત અપ્રાપ્તમેય જ્ઞેયને અને  
 અનિત અનાગતે ધર્ષતા અપ્રાપ્તમેય જ્ઞેયને ક્ષેત્રથી  
 અને કાલથી દૂર અને નિકટ વ્ધી અપ્રાપ્ત અને  
 પ્રાપ્તમેય જ્ઞેયને જે જેમ છે તે તેમ સમકાલે અજ્ઞેય  
 ધણે જાણો છો વ્ધી કોઈ પણ જ્ઞેય વ્ધી નથી જે  
 તમારી જ્ઞાયકતામાં ન ધાસે ॥ ૨ ॥

છતિ પરજાય જે જ્ઞાનનરિ લાલ, તે તે  
 નવિ પલટાયરે ॥ સા૦ ॥ જ્ઞેયની નવનવ

विनारे लाल, सवि जाणे असहायरे ॥ सा०

। प्र० ॥ ३ ॥

अर्थ:-ज्ञानना अविभागी छती पर्यायमांधी  
 ती पर्याय कोई काले पण नाश थाय नहीं अने तेज  
 अविभागी छती पर्यायो छतीपणे रहिने सामर्थ्यपणे  
 मादे छे पण अक्षतीपणे धता नथी पटले छतीपणानो  
 राय नथी; मात्र निरो अने आधीर्भाव यथां जाय.  
 ज्योनी नवे नवे समय नवि नवि वर्तना थाय ते  
 अण्य द्रव्यनी सहाय विना अने प्रयासविना जणाय  
 देलाय ॥ ३ ॥

धर्मादिक सहु द्रव्यनोरे लाल, प्राप्त भणी  
 सहकार रे ॥ साहि० ॥ असनादिक गुण वर्त-  
 तार लाल, निज क्षेत्रे ते धाररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ४ ॥

अर्थ:-धर्मादिक अजीव द्रव्य प्राप्त यपाने सहाय-  
 कागी छे पटले धर्मास्तिकायना जे प्रदेशमां गति  
 परिवर्तनी जीव पुद्गल. आधी प्राप्त थाय तेनेज ते  
 गतिरहाय आपे, अधर्मास्तिकायना जे प्रदेशमां  
 स्थिति परिणामी जीव पुद्गल आधी प्राप्त थ य  
 तेनेज ते स्थिर सहाय आपे, आकाशना जे प्रदेश रं

जीव पुद्गल आर्था प्राप्त थाय मले तेनेज ते भव-  
 काशदान भाषे पण अन्य प्रदेशे रह्याने थाये नहीं,  
 वली चार अंश स्निग्ध के गुरु व्यक्तिमां जे पुद्गल  
 परमाणु हांय ते तेज क्षेत्रमां तेथी वे अंश न्यून  
 के अधिक स्निग्ध रक्त गुण व्यक्तिवाला अन्य  
 पुद्गल परमाणु आर्था प्राप्त थाय तां तेनी साथे ते  
 मले पण अन्य आकाश क्षेत्रे रहेला स्निग्ध के गुरु  
 वे अंश न्यून अधिक व्यक्तिवाला पुद्गल परमाणु  
 अगर खंध म्युंये मले नहि अने कार्मणादि वर्गणा  
 जीव प्रयोगे परिणमेली जे आकाश क्षेत्रमां हांय ते  
 ते आकाश प्रदेशमां रहेला अन्य वर्गणा साथे मले.  
 ए प्रमाणे धर्मास्तिकावादि चारे अजीव द्रव्यने अन्य  
 प्रदेशे रहेलाने चलाववुं, धीर राखवुं, अवकाश  
 आपवुं, के प्रकृत्युं यतुं नथी, वस्तु तथा मन बिना  
 रसनादिक चार इंद्रियोने ध्वंजनापग्रह छे पटले  
 स्पादपाली वस्तु जीव प्रदेशने मले अने स्पर्शवाली  
 वस्तु स्थाने मले अने गंधना पुद्गल नाशीका  
 अंदर घाणाइंद्रियने मले-स्पर्श अने शब्दने पुद्गल  
 पददाने मले-स्पर्श तोज तंनं दोष  
 था. ए पांचे इंद्रियो दूर क्षेत्र विषयी कही छे पण

रसनादिकु चार इन्द्रियोने तो ते विषयोना पुदुगल  
 त्तेवमां धीयो मले तेनेज स्वर्ण छे अने चक्षु  
 द्रिये तो पुदुगल पदार्थ ऊपर पडेलु सूर्यादिनुं  
 शाने किरण परायर्त्तन भई चक्षुमां आवे त्यां  
 चोष पाय छे तेथी तेने व्यंजनायग्रह कष्टो नथी  
 एव उद्योग किरण पस्तु ऊपर पटी परायर्त्तन भई  
 शानेमां आख्या विना तेनो चोष धनां नथी अने  
 समुजीना केषलज्ञानमां तां क्षेत्रे काले दूर निकटना  
 एव रूपी प्ररूपी स्वर्ण पदार्थनो समनाले चोष  
 पाय छे ॥ ४ ॥

जाणग अभिलाषी नहिरे लाल, नवि  
 प्रतिबिंबे क्षेत्रे ॥ सा० ॥ कारक शक्ते जाण-  
 हुंरे लाल, भाव अनंत अमेपरे ॥ सा० ॥  
 प्रमु० ॥ ५ ॥

अर्थ:- प्रमु परद्रव्यने जाणवाना अभिलाषी  
 थो अने अन्य जेपोलुं प्रतिबिंब पच शोनानी जाण-  
 वामां पडनुं नथी पण जीवमां अनेन गुणोनां  
 तरेक, चक्र आप आपणा कार्यपणे दूर समय वरे  
 तेमां जाव कारक, चक्रमां नथा नथा समपनी

माहरी ज्ञायकला माहुरा द्रव्य  
 तत्त्व जाणी मंतोप अने  
 रस अनुभवे. ते तो  
 सेवया आदरयानी  
 ॥ ७ ॥

लाल, नाथ भक्ति  
 रंगी चेतनारे लाल,  
 ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ८ ॥

साधक भावे परिण-  
 पलाटाची साधक भावमां  
 प्रसुतायंतनी आणा सेवयी  
 पुष्ट आधार छे. ए माटे चेतना  
 करयी एज आ यातनुं जीवन अने  
 ॥

अमृत कियाने  
 रंगे रमेरे लाल,  
 ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ९ ॥

अनुष्ठानने साधने, अमृत उपजे:

देवेंद्र मुनि कहे छे के अघ्य जीवो शुद्धारमं तत्त्व-  
मां रमे ते सुमति, देवनोज पसाय जाणयो ॥ ६ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ चउदशम श्री शिवगति जिन स्तवन ॥  
पांरा मेहेला ऊपर मेह झयुके बाइली हो लाल ॥  
ए देखी ॥

शिवगति जिनवर देव सेव आ दोहिली  
हो लाल ॥ से० ॥ पर परिणति परित्याग करे  
तसु सोहिली हो लाल ॥ करे० ॥ आभव सब  
नियारि जेह संवर घरेहो लाल ॥ जेह० जे  
मिन आणा लीन पीन सेवन करे हो लाल  
॥ पीन० ॥ १ ॥

अर्थ:-शिवगति नामा शीवमा तीर्थवरनी सेव्य  
ते अति दोहिली छे. हमी संसारी जीव निप्यात्व  
अपिरति प्रसाद कपाय जोगबंदता बरो जे जे  
मार्गे बालीप द्विये ते अशियमार्ग से एतले बस्याब-  
कारी मार्ग मधी. जे अशिय मार्ग प्रहर्ये ते



संसार मानेलो छे एण मोहरी शायकता मोहरा द्रव  
 क्षेत्र काठ थने भावमा तत्त्व जाणी मतोपः मं  
 तूमी चाली थाय तो ते समता रस अनुभवेः ते तं  
 सुमति जिन स्वामीण सुमति सेववा आदरवानं  
 पंतायी तेमां व्यापे तोज वने ॥ ७ ॥

साधकता पलटाववारे लाल, नाथ भक्ति  
 आधारे ॥ सा० प्रभु गुण रंगी चेतनारे लाल  
 एहीज जीवन साररे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ८ ॥

अर्थः—हमारी अनादिनी साधक भावे परि  
 मैली आत्म परिणतिने पलटायी साधक भावा  
 लायया तुम मरखा प्रभुनापंतनी आणा सेव-  
 एण हमारे परम पुष्ट आधार छे. ए माटे चेतना  
 प्रभु गुण रंगी करवी एज आ यातनुं जीवन अने  
 संसार छे ॥ ८ ॥

अमृतानुष्ठाने रसोरे लाल, अमृत क्रियाने  
 उंगाररे ॥ स.० ॥ देवचंद्र रगे रमेरे लाल,  
 ते सुमनि देव पसायरे ॥ सा० ॥ प्र० ॥ ९ ॥

अर्थः—अमृत अनुष्ठानने आश्रये, अमृत उपजे:

इस शब्द मुनि कहे छे के अर्घ्य जीवो शुद्धारम तत्त्व-  
 मां रमे ते सुमति देवनोज पसाय जाणयो ॥ ६ ॥

संपूर्ण.

॥ अथ चउदशम श्री शिवगति जिन स्तवन ॥

गंगा मेहेला ऊपर मेह झयुके वाइली हो लाल ॥  
 ए देयी ॥

शिवगति जिनवर देव सेव आ दोहिली  
 हो लाल ॥ से० ॥ पर परिणति परित्याग करे

तसु सोहिली हो लाल ॥ करे० ॥ आभय सर्व  
 नियारि जेह संवर घरेहो लाल ॥ जेह० जे

जिन आणा लोन पीन सेवन करे हो लाल  
 ॥ पीन० ॥ १ ॥

अर्थ:-शिवगति नामा शैवमा तीर्थ करनी सेण  
 ते अति दोहिली छे. हमो संसारी जीव भिष्यात्  
 अपिरति प्रसाद कपाय जोगचपलता बशी जे जे  
 मार्ग बालीए दिये ते अशिष्यमार्ग छे पटले बर्या-  
 कारी मार्ग नथी. जे अशिष्य मार्ग प्रथे ते अंधित

सुख पामे नहि अने दुःखी रहे वण जेने शियगती  
 के शिव बाल छे एहवा जिनबर देवनी आज्ञा  
 सेवची ते परम दुर्लभ छे वण पर परिणतिने जे रुढी  
 रीते त्यागे—दूर करे तेने ए सेवा सुलभ छे जे  
 जीव सत्तावन्न प्रकारे अथवा तो अनेक प्रकारे आ-  
 भव तजी संवरयंत थाय तेन पुरुष जिन आज्ञामां  
 परम लीन धई पुष्टपणे जिन आज्ञा सेवे. अनेक प्रकारे  
 आश्रय कथ्यो वण ते परबस्तुना राग रूप एक अशुद्ध  
 उपयोगमांज समाध छे अने ज्ञेय ते तो राग होय  
 योज उपजे. उक्तंच " पर दग्ध रजं बहर्भरं, धिरजं  
 कुर्वेई अठ क्रमेहि, एमो जिह्य उयएसो, समामउं  
 पंथ मोहवस्म " ॥ १ ॥

वीतराग गुण राग भाके रुची नेगमे  
 होलाल ॥ भ० ॥ यथाप्रवृत्ति भुव्य जीव नय  
 संग्रह रमे हो लाल० ॥ नय ॥ अमृत क्रिया  
 वचन आचारथी होलाल ॥ वचन० ॥  
 जिन भाके करे व्यवहारथी हो-  
 ॥ करे० ॥ २ ॥

नोक्षार्थी जीव जिन भक्ति तथा साधन

द्वार सात नये करी करे ते कहिए धिये.

(१) योतरागना-गुणोन्नो राग अने योतरागनी  
॥ सेवयानी रुचि ते नैगम नये भक्ति कहीण ।

(२) उपारे भव्य जीव छेल्हुं यथाप्रवृत्तिकरण  
त्यारे संग्रह नये भक्ति कहीण. ए करणमां  
पणे जिन प्ररूपिन नखनो अभिलाषी जीव छे ।

(३) जिन यचनमां जे आधार क्रिया अनुष्ठान  
पानुं कहां ते धिय गरल अने अग्योन्य अनुष्ठान  
गी मोक्षार्थी जीव भेदज्ञानादि श्रुत धाचनी,

पृच्छना, परिच्छटनां, अनुप्रेक्षा,, धर्मकथा तथा वि-  
नय वैयावक्यादि आत्म शुद्धनाने तदुद्देतु क्रिया अने  
शुक्लध्यान रूप अमृत क्रिया विधिने सेवे ते स्व-  
दार नये भक्ति कहीण ॥ २ ॥

गुण प्राग्भावी कार्य तणे कारणपणे हो

लाल ॥ तणे० ॥ रश्मत्रयि परिणाम ते ऋजु-

सूत्रे भणे हो लाल ॥ ते ऋजु० ॥ जे गुण

प्रगट धयो निज निज कारण करे हो लाल

के ॥ निज० ॥ साधक भावे युक्त शब्द नये

ते धरे हो ला... ॥ शब्द० ॥ ६ ॥

अर्थः—(४) ज्ञानादि अनंत आरम गुणो सुद  
 प्रगट करया रूप कार्गनो परिणामी भगो जीव ते  
 गुण्य शुद्ध ज्ञान दर्शन गरणादिना परिणाम करे ते  
 कजुगुप्त नमे भक्ति कर्हीण (५) ज्ञानादिक शून्या  
 गुण जे जे थेंजे प्रगट भई आप आपणुं कार्य शु  
 प्रगटपणे करया नामे अने संवे गुणां पूर्णे प्रगट कर  
 यानो साधक भाव आदरे ते शब्द नमे सेया भक्ति  
 कर्हीण ॥ ३ ॥

पेते गुण पर्याय प्रगटपणे कार्यता हो  
 लाल ॥ प्र० ॥ उणे पाये जाव ताव सांभि  
 रूढता हो लाल ॥ ताव० ॥ संपूरण निज  
 भाव स्वकारय कीजते हो लाल ॥ स्व० ।  
 शुद्धातम निज रूप तणे रस लीजते हे  
 लाल ॥ त० ॥ ४ ॥

अर्थः—(६) केवलज्ञान केवलदर्शन पथाख्यात  
 चारित्र अने परम अथल धीर्षगुणो अने पर्याय  
 प्रगटपणे आपआपणुं कार्य करे अे त्यांधीज ज्यांतुं  
 अव्यापध अक्षयस्थिति अटलअयगाहना अने ४  
 गुणलघु ए चार गुणोना अंशो अधातो कर्म वां

स्यांसुधी पूर्ण प्रगट करया नयो स्यांसुधी समभि-  
 रद नये सेवा कहिए (७) शैलेसी करणना छेला  
 समय आवे गुणोना सर्व अंश प्रगट निर्मल करया  
 बने ते मुख्य आठ गुण शिवाय अनंता गुणोना  
 एवं अंश प्रगट भया थने ते सर्वे गुणो आपआपणु  
 सर्व पूर्ण पर्याये पूर्ण पदे करया लाग्या स्यारे एवं-  
 नून नये सेवा धई एटले चौदमा गुणठाणाना चरम  
 समये एवंभूतनये सेवा जाणवी. ए स्थान के पूर्ण  
 आत्म शुद्ध पर्यायनो लाभ ले छे स्यां एवंभूतनये  
 वा धई जाणवी सेवानुं फल सेवा साथे मलेज  
 पण कालांतरनो बाधदो नधी. कोई कहे के-मेघानुं  
 क तो ते भये अथवा भर्षाते पण फले छे तेने  
 तीप के शुभ उपयोगने शुभ कर्मदल संघाय ते  
 मुक्तमे उदय आवे पण अर्हीभां तो शुद्धतानी धान  
 अने शुद्धतामां आत्मगुण प्रगट भयानो आनंद  
 त ता तरतकाल आवे छे अने ऊंचा गुणठाणानुं  
 कारण भाय छे. जेम सूर्य उगयो के तेज धरने अंध-  
 कार नाठो अने उद्योग भयो तेना आनंद तेज धरत  
 आध्यात्म अर्हीभां अशुद्धता नाठी अने शुद्धता  
 प्रगट धई ते अशुद्धतानुं दुःख, गर्पु अने शुद्धतानो

आनंद आध्या एमांहे कालक्रमनुं जोर नथी ॥ ४ ॥

उत्सर्गें एवंभूत ते फलने नीपने हो लाल  
 ॥ ते० ॥ निसंगी परमात्म रंगथी ते घने हे  
 लाल के ॥ रं० ॥ सहज अनंत अत्यंत महंत  
 सुखे भर्या हो लाल ॥ म० ॥ अविनाशी  
 अविकार अपार गुणे घरया हो लाल । अ० ५

अर्थ:-र्षादमा गुणठाखाना अंतें पूर्ण गुणपर्या  
 प्रगट करया अने तेनुं फल लीधुं ते उत्सर्गें एवंभूत  
 नये सेवा र्था. एया निसंगी परमात्म भाधर्मा रं  
 राख्यार्था ए सेवा घने. प्रभुजी सहज स्वभाव  
 अंत रहित अनंत सुखे भरपूर महंत छो घली वि  
 नाश रहित विकार रहित अथाह गुण घरया छो ॥ ५ ॥

जे वृप्रति भव मूल छेद् उपाय जे हो लाल छि०  
 प्रभु गुण रागे रक्त थाय शिवदाय ते हो लाल था  
 अंश थकि सरवंश विशुद्धपणुं ठवे हो लाल वि०  
 शुक्ल धाज शशि रेह तेह पूरण हुवे हो लाल तेह

अर्थः-आत्म स्वरूपना अज्ञान अने मिथ्यात्व  
 गादिकावडे जे प्रवृत्ति ते भवभ्रमणतुं मूल छे अने  
 मुना मुद्र गुणोनी रागे रक्त थुं तेज अय अम-  
 तुं मूल घेदवांना मुख्य उपाय छे तथा मकळ  
 पद्रवनी पना करनार आखिर शिवदायी धाय छे  
 तले प्रसु गुण राग रूप शुभ उपयोग ते शुद्ध उप-  
 रोगतुं परम कारण छे अने शुद्ध उपयोगे मुक्ति छे  
 मय थकी सर्वांग विशुद्धता प्रगटे पटले नैगमन-  
 ययी जे बीतरांगनी आज्ञा सेवयानी रुची कही ते  
 विशुद्धताना अंश छे अने विशुद्धतामां गर्भित शुद्ध-  
 ता छे ते विशुद्धता साये गर्भित शुद्धता घघने  
 घने एषंभूतनये पूर्ण शुद्धता प्रगटे जेम बीजनो सं-  
 प्रमा उर्या पड्यो दिने दिने कला घघते घघते पूनमे  
 पूर्ण सोले कलाए प्रगट धाय तेम नैगम सेवायी  
 विशुद्धता अने गर्भित शुद्धता शरु धां ते ते घघते  
 घघते बीदने शुपठायी एषंभूतनये पूर्ण शुद्धता  
 प्रगटे ॥ ६ ॥

तिम प्रभुयी शुचि राग करे बीतरागता हो लाल

॥ करे ॥



गुण एकद्वे थाप सगुण प्राभाता हो लाल  
हरग० ॥

देवनांद्र गिननांद्र सेवा माहि रदो हो लाल ॥  
सेना० ॥

अप्यापध अगाध आनन गुण संपदो हो  
लाल ॥ आ० ॥ ७ ॥

अर्थ:-सैम प्रमुखा पवित्र राग से आनन पूर्ण  
घोतरामता प्रगट करे, प्रमुना निर्मल गुणनु एकद्वे  
ध्यान करवापी प्रगति आत्म गुणभी गनना वाम  
पूर्ण गुण प्रगटे, एम देवोमां सेदमा समान एव  
शिष्यगति माहेषना मेधामां रही आत्मिक अनंत  
अप्यापध अगाध सुखने मादिअनंतकाल सुध  
भोगवां-रायो ॥ ७ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ पंचदशम श्री आस्तागांजन स्तवन ॥

॥ मन मोह अमारु पडे गुणे ॥ एं देखी ॥

करो साचा रंग जिनेश्वरु, संसार विंग  
सह अन्यरे ॥ सुरपति नरपांत संपदा, ते तो

दुरंगधी कदन्नरे ॥ करो० ॥ १ ॥

अर्थ:-हे ! दाम्बन्त सुख अभिलाषी भव्यो !  
 तमो आस्ताग स्वामीना वचने अने आस्ताग स्वा-  
 मीना गुणोमां साचो रंग करो. संसार चिरंग के०  
 संसारना अनेक प्रकारना जे घन विषय सन्मान  
 घ्रायुष्य कुंडुवादि तेमां मिथ्या दशाए रंग लागे छे  
 पण ते सर्वे विपरित रंग छे अने आत्मक्षेत्रधी न्या-  
 रो विनाशक भय भरेलो परंतत्र पूर्वापर क्लेश  
 युक्त छे. देवोना पति ईद्रो अने मनुष्योना पति  
 पत्नी राजाउं आदिना संपदा जे अश्व गज स्त्री  
 आदि ते तो जगत् जीवनी एवं, दुर्गंधीक अने सडे-  
 ला अनाज जेवी, विह्वलता करायनार, पापकारी  
 दीनता युक्त छे पण तेमां मोह मदिरानी छाके अथ  
 धुंध पया जीवोने सुख जणाय छे पण परमार्थ ते  
 रोग अने रोगना उपचार छे ॥ १ ॥

जिन आस्ताग गुण रस रमी, चल विषय  
 विकार विरूप रे ॥

विण समकित मते अभिलखे, जिणे चाख्यो

शुद्ध स्वरूपे ॥

॥ क० ॥ २ ॥ निज गुण चिंतन रस रम्या,  
नसु क्रोध अनलनो ताप रे ॥ नवि व्यापे  
कापे भवस्थिता, जिम शीतने अर्क प्रतापे  
॥ क० ॥ ३ ॥

अर्थ:-श्री आस्ताग जिन पोताना ज्ञानादिव  
अनंत शुद्ध गुणमां रसीथा अने अखंड समग स्व  
तंत्रपणे रमण करवावाला छे. चलायमान विषय  
धिकार ते आस्ताग स्वामीना गुणधी उलटो दुःख  
अने क्लेश रूप छे. ज्यासुधी सम्यकज्ञान नर्थ  
त्यासुधी मूढ जीव एहंवा विषयरूप दुर्युषोनं  
अभिलाषी होय पण जेणे शुद्ध गुण स्वरूपनो स्वा  
वाच्यो ते तो निज शुद्धात्म गुण चिंतन रस जल  
मां रम्या, तेने क्रोधादिक कषाय अग्निनो ताप  
कादापि व्यापे नहि पण ते भवस्थितने कापे जेम  
सुर्यनो प्रताप शीम कापे छे तेम जाणतु ॥ २ ॥३॥

जिन गुण रंगी चेतना, नवि बांधे अभि-  
नव कर्मरे ॥ गुण रमणे निज गुण उलसे,

आस्वाद निज धमरे ॥ क० ॥ ४ ॥

अर्थः—जे जीव जिन गुणोमां रंगी भयो ते नया  
नै पंप करे नहीं. जिन गुण रमणे पोताना आस्-  
वदुद्ध उद्दाम पामे प्रगट भाव ते त पोताना ज्ञान-  
यन चरणादिक. धर्मनो स्वतंत्र आनंद ले ॥ ४ ॥

पर त्यागी संगुण एकत्वता, रमता ज्ञाना-  
दिक भावरे ॥ स्वस्वरुप ध्याता थई, पामे  
शुचि खायक भावरे ॥ क० ॥ ५ ॥

अर्थः—जे पुरुष पुद्गल परिणतिनुं कर्त्तापणुं  
भोक्तापणुं रक्षकपणुं ग्राहकपणुं ध्यापकपणुं तथा  
राग-द्वेष अने ममता त्यागी स्वस्वरुप ध्याने एकत्व  
रही ज्ञानादिक रम्य रूपमां तमाण करे ते पूर्ण-स्व-  
स्वरुपनो ध्याता थई पवित्र अक्षय क्षायक भाव  
पामे ॥ ५ ॥

गुण करणे नव गुण प्रगटता, सत्तागत-  
रस-थिती छेद रे ॥ संक्रमणे उदय-प्रदेशयी,  
करे निर्झरा टाले खेदरे ॥ क० ॥ ६ ॥

ध्यात्वः अने प्रमादनी निद्रा हती ते हमे छोटी ॥१॥  
 सहजे प्रगटयो निज पर भाव विवेक जो,  
 अंतर आत्म ठहरयो साधन साधेरे लो ॥  
 साध्यालंघी थई ज्ञायकता छेरु जो, निम सुध  
 परिणति थिर निज धर्म से ठेरे लो । ज० २

अर्थ:- शुद्ध नये अमृत समान तमारी बाणी  
 जाणी आरम लक्षण अनात्म लक्षण भिन्न भिन्न  
 जाणी सहजे निज परभाव विवेक प्रगट थयां अने  
 बंध मार्ग मोक्ष मार्ग संघर्ष मार्ग अने आश्रय मार्ग  
 ए आदि मार्ग साक्षात् जाण्या हे प्रभुजी ! तमारा  
 बचनधी उलटा अने दूर रहेवावाला कुमतिपणे  
 चालनार अने चलावनारनां भव भ्रमण करतां केवा  
 हवाल थरो ? ते विचारतां चित्तमां भुजारो आवे  
 छे वली ते कुमतिउं, उपकारीना हितकारी बचनो-  
 धी दूर रहे अने मोक्ष मार्गमा प्रेरतां उलटा कोप  
 करे छे तेने शुं करीए ? पण हमारो अंतर आत्मा  
 तमारी परम ज्ञान परम न्याय परम दया भरया  
 बचन सांभली शुद्ध साध्य जाणी साधन साधवामां  
 रपो ए प्रभुनो परम उपकार छे हमारो ज्ञायकता

आलंबन तजी शुद्ध साध्य आलंबने द्वेक बलगी  
 रले प्रभुनी आशा आलंबनमां पय टकी तेषी निज  
 परिणति निज ज्ञानादिक शुद्ध स्वाभाविक आनंदमां  
 प्र पूर्ण- रमया लागी रही ॥ २ ॥

त्यागीने सवि पर परिणति रस रीझ जो,  
 तगी छे निज आत्म अनुभव ईष्टतारे लो ॥  
 तहेजे छुटी आश्रय भावनी चालजो, जालम  
 प्रगटी संवर शिष्टतारे लो ॥ ज० ॥ ३ ॥

अर्थ- शुद्धगल परिणति रस रीझ त्यागीने आ-  
 र गुण अनुभव अभ्यासमां ईष्टपणुं जाग्युं तेषी  
 सहजे अनादिनी आश्रय भावनी चाल-देव हती  
 ते छुटी. एवी महा जोरावर संवर भावनी शिष्टता  
 व० उत्तम चाल प्रगट धई ॥ ३ ॥

बंधना हेतुं जे छे पाप स्थानजो, ते प्रभु  
 भगते पाम्या पुष्ट प्रशस्ततारे लोल ॥ प्येय  
 गुणे बलग्यो पूरण उपयोग जो, तेहया पामे  
 घ्याता प्येय समस्ततारे लोल ॥ ज० ॥ ४ ॥

जिन आलंबनी निरालंबता पामे जो, तेणे  
हम रमशुं निज गुण शुध नंदनवने  
लोळ ॥ ज० ॥ ५ ॥

अर्थ:-संसार समुद्र तरयो अति दुस्तर हतो  
ते जेम गाथना पगलाथी पृथ्वी उपर पढेला खाड-  
मां भरायेलु पाणी सहजे उंलंघी जयाप तेम ते  
भवसमुद्र प्रभु आलंबने तरयो अति सुगम थयो.  
एम प्रभुना आलंबने जे वसें ते निरालंबपंगुं पामे  
एटले मे पुरुषने कोई अन्य पुरुष के अन्य वस्तुंनु  
आलंबन लेधानी कदापी जरूर रहें नहीं. ते माटे  
हमे प्रभु अवलंबने निरालंबता पामी निज शुद्ध  
गुण नंदनवनमां आनंदे रमोशुं ॥ ५ ॥

साध्यादि निज प्रभुताने एकत्वजो, क्षा-  
यक भावे थाये निज रत्नप्रयीरे लोळ ॥  
प्रत्याहारी धारे धारणा शुद्ध जो, तत्त्वानंदी  
पूर्ण समाधि लय सईरे लोळ ॥ ज० ॥ ६ ॥

अर्थ:-शुद्ध साध्य आदि निज प्रभुतामां एक-  
त्व परिणामे रमे एटले शुद्ध साध्य जांवी सिद्धि

रवामां शुद्ध साधनाए निज प्रभुता के० निज  
 प्रक्तिमां एकत्वपणे धिर. उपयोगे प्रवर्त्ते तेने पोता-  
 । केवलज्ञान केवलदर्शन अत्रे केवल चरणरमण  
 रायकभावे थाय. परभावथी परिणाम पाछो वाली  
 टले प्रत्याहार करी शुद्ध ध्येयमां धैर्यपणे धारणा  
 । ले, धीर्य अचल राखी अटोल रहे तो तत्त्वानंदी  
 । थि पूर्ण समाधिमां लयलीन थाय एटले धिक्कुरे  
 । पैलो उपयोग शुद्ध अचल निज रूपमां लय पा-  
 । परम अचल समाधिमय रहे ॥ ६ ॥

अध्यायाध स्वगुणनी पूरण रीत जो, कर्ता  
 । का भावे रमणपणे धेरे लोल ॥ सहज  
 कृत्रिम निर्मल ज्ञानानंदजो, देवचंद्र एक त्वे  
 वनधी वरेरे लोल ॥ ज० ॥ ७ ॥

अर्थ:-अनंता गुणो अध्यायाधपणे राख्यानी  
 एज पूर्ण रीत छे के स्वगुण कर्ता भोक्तापणामां  
 पोताना परिणामनुं रमण अखंड समय एकत्वपणे  
 धारे—राखे एटले देयमां चंद्रमा ममान नमिस्वर  
 स्वामीनी सेवामां परिणाम एकत्वपणे राखवाथीज  
 सहज स्वभाविक निर्मल अनुपधरित ज्ञानानंद  
 पासीए ॥ ७ ॥

॥ समाप्त ॥



॥ अथ सप्तदशम श्री अनीलजिन स्तवन ॥  
॥ देखो गति दैवनीरे ॥ ए देशी ॥

स्वारथ विणु उपगारतः रे, अद्भुत  
तिशय सिद्धि ॥ आत्म स्वरूप प्रकाशता  
पूरण सहज समृद्धि ॥ अनील जिन सेवीपरे  
नाथ तुमारी जोडि न को त्रिहुं लोकनेरे,  
प्रभुजी परम आधार अछो भवि थोकनेरे ॥॥॥

अर्थ:-हे अनीलनाथ स्वामी ! सत्तरमा तीर्थ-  
पति तमे पोतानो स्वार्थ तो सिद्ध करयो छे हरे  
हमारधी तमारे काई पण स्वार्थ नथी ते छता पण  
तमे तमारा संरखा भव्य जीवों ऊपर परोपकार करो  
थली अद्भुत अतिशयवंत छो. पटले तमारा अपा  
पापगमन अतिशय बडे तमारां पाप दुरित  
नाश थाप छे थली तमारा घषनातिशय बडे हने  
हमारां भापामां तमारां घषन सहजे समजीव  
दिये थली तमारा परम ज्ञानातिशय पसाये हमारे  
अनाम्नी भिन्न शुद्धात्म स्वरूपनुं ज्ञान थाप छे  
थली तमारा पूजातिशय पसाये हमे हमारा पूज्य

परमरत्ने पामीए एवी तमारी अतिशयादिक तथा  
 बट महा प्रातिहार्यादि तथा अंतरंग केवलज्ञान  
 र्णनादिकनी भाष लक्ष्मी छे बली तमे शुद्धात्म  
 करूपना प्रकाश करवायाला पूर्ण सहज समृद्धि-  
 नि बौ माटे हमे अनील प्रभु तमोने सेवीए. तमे  
 मोने संसार दुःखधी छोटावपावाला हमारा नाथ  
 ०. श्रिलोकमा अथ काले तमारी जोडीनां कोई  
 न्य हेतू के. उपगारी नधी तैथा प्रभुजी तमे थोक  
 र भवि जीधाने परम आघार छौ ॥ १ ॥

परकारज करता नहिरे, सेव्या पार न हेत  
 सेवे तनमय थईरे, ते लहे शिव संकेत आ. १२।

ध्याः--प्रभुजी तमे पर जीष तथा पर पुद्गल  
 र्णना कर्ता नधी अने तमने सेवनार भविने निर-  
 पधी तमे पालवावाला के राखवावाला के पार  
 णववावाला नधी पण तमने जे तन्मय थई सेवे  
 तेने तमे जाणे समरणा भंष कलाहंष दिप  
 ०। एम जयाप ते पण तेजा देवानु तेज दुष्ट  
 पणुण फल पामे दे एमां काई देवा नयो ॥२॥

धरता निज गुण सृष्टितारे, गुण परिणति

रिहो ॥ मोह रहित मोहन जयाको उपशम  
रस क्यारि हो ॥ अहो उपशम रस क्यारिहो  
॥ व० ॥ १ ॥

अर्थ:-हे जगोचर स्वामी ! शब्द पूनमना  
चंद्रमा समान तमारा घटन कमलनी बलिहारी  
जाउं—घारी जाउं. मोहन जया माताने आनंद  
आपनारा मोहन जांतला भवि जीवोना हृदय कम-  
लमा उपशम रस सीध्यावाला पोते उपशमरस-  
ना क्यारा हो ॥ १ ॥

मोह जीव लोहको कंचन, करवे पारस  
भारि हो ॥ समकित सुरतरु उपवन सिंचन,  
वर पुष्कर जलधारि हो ॥ अहो० ॥ वा० ॥ २ ॥

अर्थ:-मादरा सरखा मोही जीव लोह सर-  
वाने कंचन करवा माटे तमे-परम पारस हो पटले  
अज्ञान मिथ्यात्य कलेश रूप कीट मटावी आत्म  
शुद्धता रूप सुवर्ण करवावाला हो, समकित रूप  
पागने प्रधान पुष्कलावर्ती मेघ-  
कमलधी

शुद्ध तत्त्वामृत अखंड धाराए चरसे छे ॥ २ ॥

सर्व प्रदेश प्रगट सम गुणथी, प्रवृत्ति अनंत अपहारी हो ॥ परम गुणी सेवनते सेवक, अप्रवास्तता वारी हो ॥ अहो० ॥ व० १३।

अर्थ:-प्रभुजीने सकल प्रदेशो अनंता गुणो शुद्ध धने धनंत पर्यायो पूर्ण प्रगट धया नेथी विभाष प्रवृत्ति अनंती नाश करी. एहया परम गुणीनी आशा सेवयावाला सेवके सकल अप्रवास्तता निवारी छे एदले प्रभुनी सेवा करनार भवि जीवनी आत्म विरुद्धता अनंती टली ॥ ३ ॥

पर परिणति रूची रमण ग्रहणता, दोष अनादि निवारीहे । देवचंद्र प्रभु सेवने ध्याने आत्म शक्ति तसारी हो ॥ अहो० ॥ व० १४।

अर्थ:-ए प्रभुनी सेवारी पुद्गल परिणतिनी रूपि रमण अने ग्रहणतानी देव रूप अनादिना दोष निवारी निज शुद्ध परिणतिनी रुचि रमण अने ग्रहण करयुं. देवचंद्र मुनि कहे छे जे जीवे प्रभु ध्याया सेवयामां अग्रंड ध्यान राख्युं तैणे पौतानी

शुद्धात्म परम शक्ति संभाली लीधी ॥ ४ ॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ एकोनविंशतिम कृतार्थं जिन स्तवन ॥

॥ अधिका ताहरो हूं अपराधि ॥ ए देशी ॥

सेवा सारज्यो जिनजी मन साचे, पण  
मत मांगो भाई ॥ महेनतनो फल मांगी ले-  
ता, दास भाव सचि जाई ॥ से० ॥ १ ॥

अर्थ:-हे जिनराज ! साचे मने सेवानुं सार  
फल थायजो पण हे भाई ! सेवानुं फल मागशी  
नहि. कोई कोईनी सेवा करी तेना महेनतनुं फल  
मागे तो तेना सेवानो कामी नथी पण तेना दाम  
रूप फलनो कामी छे. जो दाम रूप फलनो कामी छे  
तो तेमां प्रभुनुं दामपणुं शुं ! पोताना दाम रूप  
फलनुं दामपणुं परयुं एदले स्वामीनुं दासपणुं न  
रह्युं माटे कारना रहित सेवा करया ॥ १ ॥

भक्ति नहि ते तो भाडायत, जे सेवा फ-  
ल जाचे ॥ दास तिके जे घन भरि निरखी,  
केकईनी पर माचे ॥ सेवा० ॥ २ ॥

अर्थ:-जे सेवाना फलने ईच्छी सेवा करे ते  
 भक्तिपूर्ण नधी पण भांडायत छे. दास तेनेज बहीए  
 राजी रहे-घरें,  
 स्वामीनी ईच्छाए

एत जम बेकई राणा पाताना दसरथ स्वामीनी  
 भक्तिमां अत्यंत रची मची रहेती हती तेम फल-  
 भांमना रहित प्रभुनी आशाए घरें ते साधो देयक  
 जाणयो ॥ २ ॥

सारी विधि सेवा सारंतां, आण म कांई  
 भाजे ॥ हुकम हाजर खिजमति करतां, सह-  
 जे नाथ निपाजे ॥ सेवा० ॥ ३ ॥

अर्थ:-मकलप्रकारे रुटी विधिए आणा मंचीए  
 घने बाई पण आणा पिराधीए नही घळी प्रभुना  
 हुकममां हाजर रही म्योजमन बरीए तो मद्रजे  
 स्वामीनी मेहेरवामी पळे ॥ ३ ॥

साहिब जाणो छे सहु वाने, श्रु बहीए  
 तुम आगे ॥ साहिब रुनमुख अगे सांगणनि  
 वान डारनी लागे ॥ सेवा० ॥ ४ ॥

अर्थः—साहेब पाते केवलजाने करीने सर्वे जाणो  
 श्रो के जे सेवामां हाजर छे ते परमानंदना कामी  
 छे तो हमे तुम आगे हुं कहीण ? पण साहेब  
 सन्मुख हमे मागण कई मागचा रूप घात करीण  
 तो ते घात असोटावणी लागे माटे जाणीण द्विये  
 के जे प्रभुनी अर्खट आणा नैपशे ते अर्खट अवि-  
 त्त फल पामशे ॥ ४ ॥

स्वामि कृतारथ तो पण तुमथी, आश  
 सहुको गखे ॥ नाथ विना सेवकनी चिंता,  
 कोण करे विणु दाखे ॥ सेवा० ॥ ५ ॥

अर्थः—शुभ क्रियानो स्वामी ते शुभ फल पामे  
 अने शुद्ध स्वभाव प्रयत्नीनो स्वामी शुद्धात्म संपदा  
 पामे ए निश्चय छे पण प्रभुजी जेवा परम दयालनी  
 आशा तो सर्वे राखे. माहारा जेवा रंक पुरुषोने  
 मोक्ष मार्गमां प्रेरथावाला नाथ विना हमारी चिंता  
 कोण मिटावे ? एटजे हमारुं चिंतित देखाट्या विना  
 कोण हमारी चिंता करे ? बली हमारुं चिंतित  
 प्रभुजी तमे जाणोज छो पण बालकनो पेटे महारेथी  
 योल्या विना न रंहेवाय तेथी कहूं छुं ॥ ५ ॥

तुम सेवा फल माग्यो देतां, देवयणो  
पुं शचो ॥ विण माग्यां वंछित फल आपे  
दिने देवचंद्र पद साचो ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थ:-जेणे ममने सेव्या तेनुं फल तसे तेने  
पुणुं आपो सां तसे सेवाना शर्था शयषा रागो  
शोधार्थं तेषां तमासं देवपुत्रुं फाणुं मयाग पण  
द्वान विना वंछित फल आपो पं तेषां तमासं  
विना वंछमा ममान पाम देवचंद्र साचुंज पं ॥६॥  
॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ विद्वानिम धी धर्मश्चिर जिन स्वयन ॥  
कारुण्यं कृप्यन लागी दयाशी व्योमर्षी न प देवी ॥  
शम वदार्थी ॥

हे नो प्रभु वारि हे तुम मुग्धी, हे मो  
दिन वलिदार्थी तुम मुग्धी ॥ शमना अमृग-  
दप मुग्धाननी, शोध नही शम वदार्थी ॥  
हे ॥ १ ॥

अर्थ:- हे विद्वान् : ममना मुग्धी हे वारि



अर्थ:-सादृश पाते केवलज्ञाने करीने सर्वे जाणो  
 छो के जे सेवामां हाजर छे ते परमानंदना कामी  
 छे तो हमे तुम आगे शुं कहीए ? पण सोहेष  
 सन्मुख हमे मागण काई मागबा रूप घात करीए  
 तो ते घात असोटावणी लागे भाटे जाणीए द्विये  
 के जे प्रभुनी अखंड आणा सेवशी ते अखंड अवि-  
 त्य कल पामशे ॥ ४ ॥

स्वामि कृतारथ तो पण तुमधी, आश  
 सहुको गखे ॥ नाथ विना सेवकनी चिंता,  
 कोण करे विणु दाखे ॥ सेवा० ॥ ५ ॥

अर्थ:-शुभ क्रियानो स्वामी ते शुभ कल पामे  
 अने शुद्ध स्वभाष प्रयत्नीनो स्वामी शुद्धात्म संपदा  
 पामे ए निश्चय छे पण प्रभुजी जेवा परम दयालनी  
 आशा तो सर्वे राखे. माहारा जेवा रंक पुरुषोने  
 मोक्ष मार्गमां प्रेरणावाला नाथ विना हमारी चिंता  
 कोण मिटाये ? एटले हमारुं चिंतित देखाएवा विना  
 कोण हमारी चिंता करे ? वही हमारुं चिंतित  
 प्रभुजी तमे जाणोज छो पण बालकनी पेटे महारेधी  
 दोह्या विना न रंहेषाय तेषी कहूं छुं ॥ ५ ॥

तुज सेवा फल माग्यो देतां, देवयणो  
 थाये काचो ॥ त्रिण माग्यां वंछित फल आपे  
 तिणे देवचंद्र पद साचो ॥ से० ॥ ६ ॥

अर्थः—जेणे तमने सेव्या तेजुं फल तमे तेने  
 माग्युं आपो तां तमे सेवना अर्थां अथवा रागो  
 कहेवाडं तथी तमाहं देवपुं काचुं गणाय पण  
 माग्या विना वंछित फल आपो छे तथी तमाहं  
 देवमां चंद्रमा समान परम देवपद सांचुंज छे ॥६॥

॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ विंशतिम श्री धर्मशिवर जिन स्तवन ॥

धन्वीयां हरद्वन लागी हमारी अखीयां ॥ ए देशी ॥  
 रांग प्रभाती ॥

हुं तो प्रभु वारि छुं तुम मुखनी, हुं तो  
 जिन बलिहारी तुम मुखनी ॥ समता अमृत-  
 मय सुप्रसननी, तरेय नही राग रूखनी ॥  
 हुं० ॥ १ ॥

अर्थः—हे जिनेश्वर ! तमारा मुखनी हुं वारी

જાહે-વલિહારો જાહે હું ણટલે દે જિનેશ્વર ! તમારા  
 મુગ્ધ કમલનો જે ચાણી ઘરમે છે તે સકલ જીવોના  
 પાપ મેલને ધોવાવાલી છે. જીવો સ્વપર દ્રવ્ય અને  
 ભાવ પ્રાણની હાણી કરી વ્યવહાર અને નિશ્ચયથી  
 સ્વપર સુખની હાણી કરે છે પણ પ્રભુજી માહણતાનો  
 હપદેશ કરી સકલ જીવના દ્રવ્ય ભાવ પ્રાણની હાણી  
 થતી અટકાવે છે તે દ્રવ્ય પ્રાણ-ઈન્દ્રિયો (૫) પલ  
 (૩) શ્વાસોશ્વાસ (૨) આયુષ્ય (૨) એમ મૂલ ચાર  
 છે અને તેના ઉત્તર ભેદ દશ છે અને ભાવ પ્રાણ જ્ઞાન  
 દર્શન ધરણ અને ધીર્ય ણ મુગ્ધ ચાર છે તેના ઉપર  
 ભેદ અનેક મથવા અનંત પણ છે. દ્રવ્યપ્રાણે કરીને  
 જીવ વ્યવહારિક મુગ્ધ મોગવે છે અને તે દ્રવ્યપ્રાણ-  
 ની હાણી કરવાથી છે વકારનું દુઃખ થાય છે જેમ  
 સ્પર્શ ઈન્દ્રિયની હાણી કરવાથી તે સ્પર્શ ઈન્દ્રિયનું  
 છેદન ભેદન થાય તેનું દુઃખ ઉપજે છે અને સ્પર્શ  
 ઈન્દ્રિય પટે જે જે સુખ હોતો મોગવતો હોય તે સુખ  
 જાય તેનું દુઃખ પણ જીવ મોગવે છે તેમજ રસના  
 ઈન્દ્રિયને છેદવાથી તે છેદન ભેદનનું દુઃખ ઉપજે છે  
 અને રસનાઈ કરીને વિવિધ પ્રકારના સ્વાદ લેતો  
 હોય તે જાય તેનું દુઃખ ઉપજે છે એમજ પાંચે

રૂઢિપોમાં પણ જાણવું યહી કાવચલનો નાચ કર-  
 થાપી દુઃખ વપજે છે અને કાવચલ ઘટે જે સુખ લેતો  
 હોય તે જાપ તેનું દુઃખ ધાપ છે એમ ઘનનચલમાં  
 અને મનચલમાં પણ જાણવું યહી શ્વાસોશ્વાસની  
 હાપી કરથાપી શ્વાસોશ્વાસ રોકાયાનું દુઃખ વપજે  
 છે અને શ્વાસોશ્વાસ ઘટે જે સુખ લેતો હતો તે સુખ  
 જાપ તેનું દુઃખ ધાપ છે અને આયુષ્યની હાળી  
 કરથાપી આયુષ્ય હાળીનું દુઃખ વપજે છે અને  
 આયુષ્ય ઘટે જે સુખ લેતો હતો તે સુખ જાપ તેનું  
 દુઃખ વપજે ધાપ છે એમ એ દ્વો દ્રવ્ય પ્રાણની હાળી  
 પી વેદના, ભય, શોક, કપાયાદિ દુઃખ વપજે છે  
 અને અવેદના નિર્ભય અશોક અકપાપનું સુખ નાચ  
 ધાપ તે દુઃખ વપજે છે યહી એ દ્રવ્યપ્રાણની હાળી  
 કરતાં જીવ એક એકથી ધૈર વિરોધ યાંધી ધૈર વિ-  
 રોધની પરંપરા ઘધારી પ્રાયે અનંતકાલ સુધી દુઃખી  
 થાય છે યહી એ દ્રવ્યપ્રાણની હાળી તે સ્વપર ભાવ-  
 પ્રાણની હાળીનું કારણ પણ થાય છે તેથી જ્ઞાન-  
 ઘરણાદિક આઠે કર્મ પોતે યાંધી અને પીજાને પણ  
 કર્મધંધના કારણ ધૈર અનંત કાલ સંસારમાં રુલે,  
 રુલાયે છે હથે ભાવપ્રાણમાં અજ્ઞાન આદરી અજ્ઞાન

पण विभाव सन्मुख जगायाली मधी ॥ १ ॥

अमर अधर सिस धनु हर कमल दल,  
कीर हीर पुन्यम शशिनी ॥ शोभा तुछ प्रभु  
देखत याकी, कायर हाथे जिम असिनी  
॥ हुं० ॥ २ ॥

अर्थ:-प्रभुना अमर आदिकनी शोभा देवता  
कमल दल कीर हीर पूनम शशि आदिकनी सथें  
शोभा ते तुच्छ देखाय छे. उपमेय आगल जे जे  
उपमा कही ते सथें कायर हाथे तरवार सरली  
जाणवी एटले प्रभुना सपने अन्य उपमा संभवेज  
नहीं माटे अनुपम रूप छे ॥ २ ॥

मन मोहन तुम सनमुख निरखत, आंख  
न तुपति अन्हची ॥ मोह तिमिर रवि इरख  
चंद्र छषी, मुरत ए उपसमची ॥ हुं० ॥ ३ ॥

अर्थ:-हे मनने प्रमोद आपयाचाला । तमारा  
सन्मुख जोतां हमारी आंख तूसी पासती नथी  
एटले वेगली खसवा पाहाती नथी घली प्रभुनी

इषी मोहतिमिरने हरषा मूर्धे समान अने हरण  
 उपजायवाने पूनमना चंद्रमा सरखी उपशम रसे  
 भी उपशमरस परसायती आनंद आपनारी छे ॥३॥

मननी चिंता मेटी प्रभु ध्यावत, मुख  
 देखतां तुम जिनजी ॥ इंद्रि तृपा गई जिने-  
 श्वर सेवतां, गुण गातां वचननी ॥ हुं० ॥४॥

अर्थ:-प्रभुना निर्मल ज्ञानादिक गुण ध्यातां  
 अने प्रभु सुगंधी शुद्ध नय स्यादाद अमृत मय  
 वचन सांभली प्रभु रूप देखतां हमारुं रूप सिद्ध  
 समान जाणी मननी चिंता मेटी गई. जिनेश्वर  
 सेवतां अने वचने करी प्रभु गुण गातां इंद्रिय  
 विषयोनी तृप्णा समी गई ॥ ४ ॥

मीन चकोर मोर मतंगज, जल शशी घन  
 नीचनथी ॥ तिम मो प्रति साहिब सुरतथी,  
 ओर न चाहुं मनथी ॥ हुं० ॥ ५ ॥

अर्थ:-मरस्य जेम पाणी थी, चकोरपंखी चंद्रमा  
 देखीने, मोर मेष देखीने अने हाथी तलाव आदि  
 नीरवाली बंढाण जग्याथी जेम मगरहे छे तिम मने

साहेबनी गुरत रेणो परम सादरजाद उरजे वं  
 नेणी प्रभुनी प्रभुना शिवाग तुं अन्ग पदार्थी कुरेव  
 कृपणनादि साहातां नही ॥ ५ ॥

ज्ञानानंदन जाया नंदन, आस दास नीय-  
 ननी ॥ देवचंद्र सेवनें अहनिश, रमज्यो  
 परिणति चित्तनी ॥ हुं० ॥ ६ ॥

अर्थ:-हे ज्ञानानंद दानार ! जाया माताना  
 नंदन, जाया माताने आनंद आपनार, दासनी  
 निरवय शुद्ध स्वरूपनी आशा पूरा. देवचंद्र मुनि  
 कहे छे के हमारा चित्तनी परिणति प्रभु आशा  
 सेवामां अह निश रमज्यो ॥ ६ ॥ ॥ संसृष्ट ॥

। अथ एकविंशतिम श्री शुद्धमती जिन स्तवन ।  
 श्री जिन प्रतिमा हो जिन मरखी कही ॥ ए वेशी ॥

श्री शुद्ध मति हो जिनवर पूरवो, एह  
 मनोरथ माल ॥ सेवकं जाणी हो महेरवानी  
 करी, भव संकटधी टाल ॥ श्री० ॥ १ ॥

अर्थ:-श्री शुद्धमती जिनेश्वर हमारी मनोरथ  
 माला पूरी करो मने तमारो सेवक जाणी महेर-

पानी करी भव संकटपी उगारो ॥ १ ॥

पतित उद्धारण हो तारण वच्छलें, करे  
अपणायत एह ॥ नित्य निरागी हो निस्पृह  
ज्ञानी, शुद्ध अवस्था देह ॥ श्री० ॥ २ ॥

अर्थ:-जेने ताहारा यथवनी सम्यक प्रकारे रुचि  
पतित छे तेने तुं संसार ससुद्रयी उद्धारवावालो  
अने घातसख्यता राखी तारवावालो छुं तो हमने  
पोताना जाणी अपणायत कर. प्रभु तुं नित्य निरागी  
पर जन परयस्तुनी स्पृहा रहित ज्ञानमय शुद्ध  
अवस्थावंत छुं अने ताहरो शुद्ध ज्ञापक देह छे। २।

परमानंदि हो तुं परमात्मा, अविनाशी  
तुज रीत ॥ ए गुण जाणी हो तुम वाणी  
थकी, ठहराणी मुज प्रीत ॥ श्री० ॥ ३ ॥

अर्थ:-प्रभु उच्छ्रुष्ट आनंदवंत परमात्मा हो.  
आत्मा तो जीव मात्र कहेवाय छे पण ते पोते  
पोताना परमभाव भोगी नथी पण प्रभु अखंड  
समय परम स्वतंत्र भाव भोगी माटे परमात्मा हो।  
तमे जे स्वभाव आनंद लेवानी रीत अरे



श्रीग अविनाशी मे ए गुण तमारी गान्धी मे  
जानी अन्वयी श्रीग मोदी तुमही श्रीग जोदी वे।३।

शुद्ध स्वरूपी हे ज्ञानानन्दनी, अव्याघाध  
स्वरूप ॥ अरजल निधि हो तारक जिनेश्वर,  
परम महोदय भूप ॥ श्री० ॥ ४ ॥

अर्थ:-प्रभु स्वद्रव्य क्षेत्र काल अने भावे पूर्ण  
शुद्ध स्वरुपी ज्ञानानन्दमय ज्ञानानन्दी छौं, सकल  
समय अव्याघाधमयी छौं, हे जिनेश्वर । तमे अवि-  
दरिपेधी भव्यने तारयायाला छौं अने पूर्ण सिद्धि  
पद रूप परम महोदय पदवीना राजा छौ ॥ ४ ॥

निरमम नितंगी हो निरभय अविकारता  
निरमल सहज समृद्धि ॥ अष्ट करम हो वन  
दाहपी, प्रगटी अन्वय रिद्धि ॥ ५ ॥

अर्थ:-तमारे कोई परद्रव्य गुणपर्यापनुं समस्य  
नधी तेम तेनो संग पण नधी तेधी भय अने कोई  
प्रकारनो विकार पण नधी अने तमारे ससाम्य  
राज रिद्धि अनन्ती सहज स्वतंत्र निर्मल छे अष्टकर्म-  
रूप वन ध्यानाग्नि घमो प्रजास्युं तेधी तमारे ज्ञानादि

खूट निर्मल, रिद्धि प्रगट धई छे ते अनंत  
जलमुषी स्वरच्यां पण खूटे नहि ॥ ५ ॥

आज अनादिनी हो अनंत अक्षता, अक्षर  
निक्षर रूप ॥ अचल अकल हो अमल  
गमनुं, अचेद, नंद चिद्रूप ॥ श्री० ॥ ५ ॥

अर्थः-प्रभुजो आज तमारे अनादिनी सत्तागत  
तपपणे रहली अनंत रिद्धि अने शक्ति व्यक्त धई  
ते अक्षर अने अनक्षर रूप के० वचन अक्षरपणे  
ती कही शकाय एवी अक्षर रिद्धि अने तेथी  
त गुणी वचन आलापमा न आवे एवी अनक्षर  
दे स्वतंत्र प्रगट धई छे तेथी तमे अचल तथा  
म के० उद्गमस्थ जीवोने तमारा स्वरूपनी  
मस्यज्ञाने पूर्ण गम न पडे तथा उद्गमस्थ मतिए  
तमारू रूप रिद्धि अने आनंद कली शकाय  
तथा तमारू रूप रिद्धि पुद्गलीक अन्यपदार्थी भेगुं  
ते जाय नहीं तेथी तमे अमल एवा ज्ञानानंदमय  
ज्ञान रूप जो ॥ ६ ॥

अनंत ज्ञानी हो अनंत दर्शनी, अनाकारी  
अविरुद्ध ॥ लोकालोक हो ज्ञायक सुहंकरू,

अनाहारी स्वयं बुद्ध ॥ श्री० ॥ ७ ॥

अथा--तमे अनंत ज्ञानी अने अनंत दर्शन  
 षो तथा आकार रहित स्वपर जीवधी अविम  
 लोकालोकना ज्ञाना द्रष्टा सकल जीवोनी सुख  
 कारण षो. तमारे काई पण आहारनी जरूर रहें  
 नधी तेधी अनाहारी षो पोते पोताधीज घोंघ पा  
 मेला माटे स्वयंबुद्ध षो ॥ ७ ॥

जे निज पासे हो ते शुं मागीए, देवचंद्र  
 जिनराय ॥ तो पण मुजने हो शिवपुर सा-  
 धतां, हो जो सदा सुसहाय ॥ श्री० ॥ ८ ॥

अर्था--ज्ञानानंदादि अनंत कार्योनी सत्ता हमा-  
 री हमारा पासेज हे तो प्रभुजी पासे शुं मांगीए ।  
 पण देयोमां चंद्रमा समान हे जिनराज । हमने  
 मोक्षमार्ग साधतां सदाए तमे सुसहाय धजो ॥८॥  
 ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ द्वाविंशतिमं श्री शिवकर जिन स्तवन ॥

शिवकर जिनवर देव, सेव मनमां रमे हो

लाल सेव मनमां रमे ॥ तन्मयताए ध्याय,

इ भव भयं वमे हो लाल तेह० ॥

पदी प्ररूपी सार, जगत जन तारवा हो

लाल जगत० ॥ द्रव्य अनंत प्रजाय, प्रमेय

निचारवा हो लाल प्रमेय० ॥ १ ॥

अर्थः—सफल अशिय दूर करी सयें प्रकारे शिव  
करवायाला एहवा शिवकर नामे गत शोचिशीमां  
पाविशमा तीर्थवंति केवलज्ञान दर्शनादि गुणे देदि-  
पमान वेपनी आशानुं सेवयुं ते माहारा मनमां रमे  
छे अथवा अविजीवोना मनमां रमां के जेनी आशा  
सेवयापी आत्मा शिवपद पामेछे पण ए प्रभुनी  
सेवा तन्मयताए ध्यायके० प्रभुजी जेम् राग देव  
छोडी शुद्ध धिर सम परिणामे ज्ञान दर्शन धरणादि  
आत्मगुणोमां रम्या तेज प्रमाणे अविजीव पण राग  
देव छोडी सम परिणामी अर्थः मुख्य दर्शन ज्ञान  
धरणमय आत्म स्वभावमां धिर योगे रमे तो सकलं  
भवभय वमे एटले भव करवानो भय तेने रहे  
नहि अने निर्वाणपद पामे. करुणा अंहार जिनेश्वरे  
जगत् जीवोने तारवा माटे प्रथम सार त्रिपदी  
प्ररूपी अने सर्व तीर्थकरो अनादिपी प्रथम त्रिपदीजं

मरुपे छे के जेथी भबि जीव आत्म अनात्म स्वरूप  
 भिन्न जाणो पोतानो उपयोग आत्म शुद्धतामां धिर  
 करी शके छे. ज्यांसुधी शुद्धात्म स्वरूपनुं ज्ञान न  
 होय त्यांसुधी पुद्गलादि परद्रव्यनी ममता अने  
 मिथ्यात्व अपिरति आदि कर्मबंधनां कारणो शक  
 रही थाठे प्रकारे कर्मबंध थया करे छे पण उपारे  
 भिन्न भिन्न द्रव्यनी उत्पादु ध्यय अने ध्रुवतास्व  
 परिणति भिन्न भिन्न जाणे त्यारे परद्रव्य उपर  
 ममता शानी रहे ? अने परद्रव्यमां आपणुं कार्य केम  
 मनाय ? अने परद्रव्यमां आपणुं कार्य मनाय नहि  
 त्यारे राग द्वेष अने शुभानुभ संकल्पों पण उपजे  
 नहि एटले जीव शुक्लस्थान पामी प्रथम घाती  
 कर्मनो नाश करी आखर सिद्धि पावे. त्रिपदी एटले  
 पंचास्ति द्रव्य सकल समय आप आपणा पूर्व  
 पर्यापनो ध्यय, नीतन पर्यापनो उत्पादु अने सत्तानुं  
 ध्रुव राखनुं करे छे एटले नये नये समय नधि नधि  
 परिणति करे छे अने मूल शुणो ध्रुव रहं छे कोई  
 द्रव्य कोई अन्य द्रव्यना पूर्व पर्यापनो ध्यय, नीतन  
 पर्यापनो उत्पादु अने तेनी सत्तानुं ध्रुव राखनुं करी  
 शकतो नथी तेथी सर्वे द्रव्यनी सामान्य विशेष

एक साक्षात्कार निरूपण है स्पष्ट है यदि  
 जीवने ममता टली जाय है अने ममता विना  
 राग द्वेष रहेता नथो एतले सुखे संजम साथी  
 सिद्धि पामे है, द्रव्य विषे भगवते कटपु  
 "उपनेवा, विगमेवा, धुत्रेवा" एतला उपरधी  
 गणधरो एक भूद्वर्त्तमां द्वादशांगनी रचना करे है  
 अने द्वादश अंगधरे जगत्मां बोधनो विस्तार कराय  
 है आपणे पण यस्तुनी त्रिपदी संभाषीए ते परद्रव्य-  
 पणु ममत्व टली उपयोग आत्म शुद्धतामां धिर  
 पाय है मोटे त्रिपदीनो अर्थ विचारो परद्रव्यधी  
 निरूप आत्म शुद्धता जाणी आत्म शुद्धतानां कामी  
 र्थ सिद्धि सुख साधयुं. प्रसुजीए तीर्थकर नाम-  
 कर्मना उदघघडे भयि जीवने तारवा त्रिपदी प्ररूपो  
 तो आपणे तेमनो परम उपकार 'सन्मानो' तेमनी  
 आणा समय मात्र पण न चूकतो सेवधी. त्रिपदीनो  
 पूर्ण भावार्थ तो केवली पोताना केवलज्ञानमां जाणे  
 है अने आदेश बरो श्रुतज्ञानी पण पूर्ण भावार्थ  
 श्रद्धा गोचर जाणे है अने द्रव्य धकी द्रष्टिवाद् अं-  
 गमां कल्या प्रमाणे अर्थ है पण अहिंसा, सक्षेपधी  
 लक्षीए द्विषे के पंचास्ति द्रव्यना प्रति. प्रवेदो स्वस्व

कार्य करवाना करण रूपे अस्तिपणे छति पर्याय  
 तीरोभावे ( गुप्तपणे ) अनंता अनंता, हे जेम जीव  
 द्रव्यना असंख्याता प्रदेश छे ते दरेक प्रदेशो जाणवा  
 रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनंता, देवता रूप  
 कार्य करवाना छति पर्याय अनंता, आचरण रमण  
 रूप कार्य करवाना छति पर्याय अनंता, धीर्य अचल  
 राखया रूप- कार्य करवाना छति पर्याय अनंता  
 तेम दान देवा रूप, लाभ लेया रूप, भोग उपभोग  
 भोगयथा रूप सुख आनंदादि अनंत कार्य धर्मना  
 छति पर्यायो प्रति प्रदेशो अनंता अनंता अस्तिपणे  
 छे ते छति पर्यायोमांथी समय पामीने अनंता पर्यायो  
 स्थकार्य करवाने आधिभावे उपजे अने प्रथम समय  
 जे पर्यायो आधीभावे आवेला होय ते आधीभायथी  
 विणसी तीरोभावे जाय अने तीरोभावे रहेला  
 पर्यायोमांथी केटका आधीभावे उपजी कार्य करे.  
 उक्तं च " उत्पाद व्यय भुव युक्तं सत् लक्षणं द्रव्यं  
 एतले नया पर्यायनुं भवन अने पूर्व पर्यायना व्यय  
 विना कोई पण कार्य धई शकतुं नथी. उत्पादु व्यय  
 धई कार्यनुं करवुं एज-द्रव्यनी सत्ता छे पण पर  
 पर्यायनुं भवन व्यय कोई अन्य द्रव्य करी शकतो

नथी एम जाएया पछी आपणुं कार्य पर द्रव्यमां  
 भासे नहि तो पर द्रव्य ऊपर राग रोप पण रहे  
 नहि. ए उत्पादु व्यय खट गुणी हाणीवृद्धिपणे धाय  
 हे ते योजा ग्रंथोथी जाणी लेजो त्रिपदी बदेज  
 अनंत द्रव्यना अनंत पर्यापना प्रमेयनो बोध धाय  
 हे माटे परम उपकारी प्रभुजीए त्रिपदी प्ररूपी ए  
 समान बाजो उपकार नथी ॥ १ ॥

जगमां द्रव्य अनंत, उतपती व्यय ध्रुव  
 रहे हो लाल उत० ॥ जे जे जेइना ते तेहना  
 तेह मांही लहे हो लाल तेह० ॥ जाणी भेदे  
 विभाव, अनंतने जे नरा हो लाल अनंत० ॥  
 याम पूर्णानंद, आत्म, संपति धरा हो लाल  
 आत्म० ॥ २ ॥

अर्थ:-जगत्मां एक धर्मास्ति, एक अधर्मास्ति  
 एक आकाश, अनंता जीव तथा अनंत पुदुगल ए  
 पंच प्रकारे अनंत अस्ति द्रव्य हे अने काल ते  
 पंचास्तिनो वर्तना पर्याय रूप अनंत द्रव्य उपधारणी  
 हे अने धर्मास्ति वापादि पंचे अस्ति द्रव्य सर्वे



सकल समय छे एम जे शुद्ध रीते निःशंकपणे जाणे  
 थने जे जेनी ते नैनामां माने तेने मिथ्यामति रहे  
 नहि थने परिणामथी मिथ्यास्व गथा पढ़ी सत्तामां  
 पण रहेलां मिथ्यातनां दलीयां ते पण क्षय जाय.  
 जगत्मां पंचास्ति द्रव्य स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव  
 अस्तिपणे शांभ्वता छे तेमां पर द्रव्यादिक रूपे न  
 थयानो स्वभाव पण अस्तिपणे छे तेने नास्ति स्व-  
 भाव फहीए एटले स्वधर्म छता रहे पण परधर्म रूपे  
 थाप नहि ए द्रव्यनुं अस्तिपणुं ते प्रथम सामान्य  
 स्वभाव जाणघो ॥ ४ ॥

निज निज वस्तु स्वभाव, न छंडे को कदा  
 हो लाल न छंडे० ॥ दर्बे निज पर्याय, रुके  
 नहि को कदा हो लाल रुके० ॥ सहज प्रमेय  
 प्रमाण, सदा सह परिणमे हो लाल सदा० ॥  
 अगुहलघु परजाय, स्वकार्यमां सह समे ही  
 लाल स्वकार्यमां० ॥ ५ ॥

अर्थ:-(२) सर्वे द्रव्य भाव भावणो वस्तु स्व-  
 भाव को पण कदापी छंडे नहि ते वस्तुव कहीए.

(३) द्रव्य मोहो जनक स्वभाव छे ते सकल समय धृती पर्यायोने सामर्थ्यपणे उपजावे अने सामर्थ्य पर्यायने पोतामाज तीरोभावे दूर्ब (सेमाव) म धृती अने सामर्थ्य छे भेदे पर्यायनी उत्पत्ति एय प्रवृत्ति कोई समय पण कोई रीते रोकाय नहि द्रव्यत्व स्वभाव कहीए.

(४) द्रव्यना सर्वे स्वभावो सर्वे समय आप पणा प्रमेय प्रमाणे परिणमे छे कोई द्रव्यनो एक गुण ते धीजा स्वगुणनु कार्य घरे नहि अने पर यना कोई गुणनु कार्य पण करे नहि ने स्वकार्य ना कोई समये खाली पण रहे नहि आप आपणी पर्यादा सूके नहि तेधीज सकल द्रव्य गुण पर्यायनु प्रमाण ज्ञान घडे करी शक्या छे ए प्रमेयत्व स्वभाव जाणवो.

(५) गुणोना धृती पर्यायो प्रदेशे प्रदेशे अनन्ता अनन्ता छे ते खट गुण हाणीवृद्धि पणे आपोर्भाव तीरोभावे सर्वे प्रदेशे सर्वे समय धर्या करे छे तेधी कोई द्रव्य हलको अगर भारे पाय नहि एहयो अगुस्तुगुत्व स्वभाव जाणवो.

हे न निज लकीने माखण शुभण किना निंशना  
 ह्य हे ॥ ७ ॥

जोग बचलता करि निज, गौरज नल  
 करि हो लालके गौरज० ॥ गंधे आटे कर्म,  
 गहन भय वन फरे हो लाल गहन० ॥ गाल  
 बाधक धरुं योग्य, साधकता ननि लक्षी हो  
 लाल साधकता० ॥ शिखर देव हृदयमां,  
 करुणा लह लक्षी हो लाल के करुणा० । ८ ।

अर्थ:-अगिरति मवाद कथायादिके जोग बच-  
 लता धाय है अने जोग बचलता यद्दो आत्मवीर्य  
 पण बलायमान धई ज्ञानावरणादि आटे कर्मनो  
 बंध करी जीव गद्दो भय वनमां करतो स्वयंभवा  
 विना अगाय दुःख भोगये है उक्तथ-भगवई अंग  
 " चलई फंदई " आत्म शृद्धिमानुं पूर्ण ज्ञान  
 धयावर्षी जीवने परद्रव्यनो गिरुहा इच्छा कामना  
 मनोरथ धतो नधी आटे ध्रणे योग पूर्ण धिरता पामे  
 छे आत्मवीर्य संवत्त धाय छे. जे जे अद्दो आत्म-  
 वीर्यनुं बलपणुं ते ते अद्दो कर्मबंध छे जे जे अद्दो

आत्मबोधार्थं अचलपणं धयुं ते ते अंशे पूर्णं कर्मबंध  
 विलय जाय अने नचिन बंध करे नहि, आत्मबोध-  
 नी पूर्ण स्थिरता बडे पूर्ण सिद्धि प्राप्त थाय माटे  
 शुद्धात्म ज्ञानमां लयलीन धयु एज श्रेय छे. कोई  
 कहेदो के हुं आत्मज्ञानी हुं पण ते राग द्वेषमां  
 वर्ततो होय तां तेने पूर्ण आत्मज्ञानी जाणयां नहि  
 पण जे जे अंशो राग गयो ते ते अंशो आत्मशुद्धता  
 प्रगट थाय छे अने तेत्तुंज आत्मज्ञान जाणवुं अने  
 ज्यां आत्मशुद्धता पूर्ण प्रगट थई त्यां रागनां अंश  
 मात्र रहेतां नथी. पूर्ण क्षायक बीतरागता प्रगट  
 थई एटले मोहनीय कर्मनाश थयो अने चारमा  
 गुणठाणाना बेह्ला वे समपमां ज्ञानाचरण दर्शना-  
 चरण अने अंतराचनो नाश थाय छे अने याकीनां  
 चार आघाती कर्म रक्षां ते स्थिति ए नाश थाय छे  
 एम जीवने परमानंद प्राप्त थाय छे माटे ज्ञाने करी  
 आत्मशुद्धता बघारवी एज मोक्ष मार्ग छे. आत्माना  
 ज्ञानु दर्शन चरणादि आत्माधी अनेदपणे रहेला  
 गुणाने निर्मल करवा ते आत्म शुद्धता कहीए अने  
 तेज मोक्षमार्ग छे. जे जे अंशधी राग द्वेषनी उपाधि  
 गई ते ते अंशो ज्ञान दर्शने चरणरूप आत्मगुणाना

थंशो प्रगट धया एम जाणवुं. आत्मज्ञान विना  
 परद्रव्यनी ममताए आत्मवीर्य बाल साधकभावने  
 पाम्युं करणवीर्यपणे प्रवस्युं साधकता जाणी नहि  
 घने साध्य जाणयो नहि साध्य जाणया विना शुं  
 साधे ? साधकता जाण्या विना केवी रीते साधन  
 करे ? मात्र साध्य शून्य क्रिया करी शुभाशुभ  
 परिणामे भय भ्रमण करे. एम जाणी शिघकर हेघना  
 छदपमां फरणारस उभरायो तेथी भविजीयोने  
 तारया अर्थे त्रिपदी प्ररूपी ॥ ८ ॥

शुद्ध अखंडित धार, अमृत घन वरसता  
 हो लाल अमृत० ॥ प्रभुजी मेघ समान,  
 भव्य द्रग दासता हो लाल भव्य० ॥ पूजो  
 भी प्रभु अंग, सुरंगे उमही हो लाल सुरंगे०  
 ॥ दरशन ज्ञान चारित्र, सर्वीर्य मयी सही  
 हो लाल सर्वीर्य० ॥ ९ ॥

अर्थ:-मेघरूप प्रभुजी शुद्ध स्यादुषादनी देरा  
 नारूप अखंड अमृतघन धारा वरसायता भवि  
 जीयोना अज्ञान मिथ्यास्य कपायादि भयद्वय ताव

समाधना शुद्धात्म भावमां थिरता करावता भवि  
 मनकितीनी द्रष्टिमां अमृत मेघ सरखा देसाय द्वे-  
 यमुजोनुं अंग पूजो एटले ज्ञान दर्शन चरख वीर्यादि  
 मनत शुद्ध गुणमय प्रभुजीना अरूपी अंगने परम  
 आदरे मनने सुरंगे ए सम शुद्ध घ्येय जाणी आनंद  
 सहित पूजो तथा देशनासुं कारण एहया प्रभुजीनां  
 औदारिक अंग-(१) चरदांगुष्ठ (२) जानु (३) कर  
 (४) भ्रुजाखंघ (५) शिर (६) भाल स्थल (७) कंठ  
 (८) हृदय (९) नाभि एम नय मुख्य तथा ते सियाय  
 नयण षदनादिक प्रभुनां सर्वे अंग सुगंधी द्रव्ये  
 पूजया लायक छे एम जाणसुं. ए अंगबडेज देश  
 विवेश करी शुक्लघ्यान करी वेधलज्ञान उपजाधी  
 भाषणेने शुद्ध साध्यानी देशना आपे छे माटे प्रभुनां  
 सर्वे अंग यहू सन्माने यहू विधे पूजया ला-  
 यक छे ॥ ९ ॥

जाणे श्रीपदी शुद्ध ते घ्यान शुक्ल लहे  
 हो लाल ते० ॥ धाती करम क्षय जाय अनंत  
 चतुक लहे हो लाल अनंत० ॥ ए विण धर्म  
 न शुक्ल लहे नहि नर कदा हो लाळ लहे०

ते माटे लहि त्रीपदी सुशिव साथी मुदा हो  
लाल सु० ॥ १० ॥

अर्थ:-जे भवि शुद्ध रीते त्रिपदीना भाव जाये  
तेज शुक्लध्यान पामे अने शुक्लध्यानना पीजो  
पावो ध्याता चारे घनघाली कर्मना नाश करे अने  
अंतत चतुष्क पामे, एम द्रव्यना उत्पादु व्यय धुवा-  
दि त्रिपदीना भाव जाण्याचिना जीव धर्मध्यान  
अने शुक्लध्यान कदावी पामे नहि ते माटे  
सिद्धांतमांधी त्रिपदीना मुख्य भाव जाणी सदा  
ध्यानंद सहित कर्मधकी मूक्तावा रूप शहो मोक्ष  
मार्ग साथवो ॥ १० ॥

अंग पूजा करि एम, आणा आरार्थीए  
हो लाल आणा० ॥ लहि निज शुद्ध स्वरूप  
मोक्षमग साथीए हा लाल मोक्ष० ॥ महा-  
गोप महामाहण, शिव सभ्यवाह छो हो लाल  
शिव० ॥ निर्यामिक महावैद्य, परम जग नाह  
छो हो लाल परम० ॥ ११ ॥

अर्थः-ऊपर प्रमाणे जिनेश्वरना दुविध अंगनी  
 विष प्रकारे पूजा सन्मान करी आज्ञा आराधीए  
 अने पोतानुं शुद्धात्म स्वरूप जाणी पुरुषार्थ पराक्रम  
 ही धीर्ष अचल राखी मोक्षमार्ग साधीए. हे  
 शमुजी ! तमे भवि जीव रूपी मायाने सम्पन्न  
 रूप रूप संजीवनी चारो चराधी आत्म जीवनमां  
 मरेत करी निर्विग्रहणे मुक्ति रूप नगरे पहुँचावो  
 हो माटे महागोप हो बली तमे घटकायाना  
 अंधाने बोधपण जीव कीर्ष प्रकारे हाणी करे नहि  
 अने तैमना द्रव्य प्राप्त तथा भाव प्राप्तुं रंगोपुं  
 हो पदयो माहणतानो उपदेश करी हो अने गणधर  
 बापायादि धारकने पण माहणताना उपदेशनी  
 मरणा करावो हो माटे तमे वामेन महामाहण हो  
 बली तमे उपद्रव रहित शिष तगान हे पदोपाहवा  
 माटे शिषमार्ग वे० मार्गमां क्रोध मोहादिक चोरा  
 वीं हाकन करी टाके नहि अने बुद्धि कादि दुष्ट  
 लक्षो उन्मार्गमां पाही टाके नहि पदया उपद्रव  
 रहित मार्ग मगदुपाहण शुद्धते शुद्धात्म स्वरूप  
 नटाधी निर्विग्रहणे हो जाई हो माटे मोक्ष नटाया  
 राधेकाह हो बली तमे रंगी राग वेप विजयक



अज्ञान रूप स्वामं कडनुं केरी जल भरलुं छे अ  
 कपायी रूप श्वापदोनुं भारे जोर छे तथा ज्य  
 अथाह विकल्पोना कल्लोली उधली रद्या छे तथ  
 उपां काम पदधानल लागी रद्या छे एहया भ  
 हरिपामां वृडेला जोयोने शुद्ध संजम जहाजम  
 लई आत्म सत्ताथल आनंदपुरी नगरीमां पहोंघाडं  
 छो माटे निर्घामक छो बली जगयासी जीवों  
 लागेला अज्ञान मिथ्यात्य अचिरति आदि दुःसाध  
 रोगोने नाश करथा ज्ञान दर्शन चरण रमण मिथि  
 उदासिधता रूप मृगांक पुछीनुं सेवन करार्थ  
 डतावले ते रोगोने मटाथो छे माटे अमोघ परमधैर  
 छो बली अशरण अनाथ उन्मार्गे पडेला एहय  
 जगयासी जोयोने सारण दारण चोयथा पडिचोयण  
 फरी करार्थी निर्भय सुख स्थानमां जाथो छो मां  
 तमे जगत्ना नाथ छो ॥ ११ ॥

चरण वदन कर नयण, परम जिनराजनां  
 हो लाल परम० ॥ १ ॥ भवि जनने होय  
 साज, आत्म सुख काजमां हो लाल आत्म  
 नाथ कृपाल विशाल, महा शुद्ध बोधती हो

लाल महा० ॥ भविः जनः पामे सिद्धिः, तत्त्व  
 निजं शोधयतीहो लाल तत्त्व० ॥ ११ ॥ ३१  
 अर्थः प्रभुंजी तमारा परम धरणघडे देश विदेश  
 विहार करी भविजीघोने संभ्यकज्ञान चारित्र्यरूप  
 केल आपो धो तेथो तमे जंगम कल्पवृक्ष समान  
 धो धली तमे तमारा वदन कमल घडे दादशंगना  
 देवना आशी शुद्ध साध्य साधन यत्तावी उपकार  
 करी धो धली तमारा परम कर कमल करी दिक्षा  
 शिक्षा आपो उपकार करी धो धली तमारा परम  
 नयण कमल घडे भवि जीघो उमर अमृतमय द्रष्टि  
 देखी, भविजीघोनी, द्रष्टि, शुद्धात्म, सन्मुख करावो  
 धो परम तमारां सर्वे अंग अने सर्वे पुण्य अतिशय  
 भविजीघोने परम उपकार परम समाधिना कारण  
 धे धली तमारा अंतरंग आत्मिक शुषो अने अंगमां  
 रहेला-पुण्य, अतिशयना, शुषो आगल : मणिमय  
 मुकट, कुंडलादिकनी, सोभातुं, तो शमे शं, दखाय  
 फरीए १ : मणि, रत्न, आदिना, मुकट : कुंडलादि  
 व्याभूषणो तो मंमारी त्रिपयी चक्रवर्ती इंद्रादि, घणा  
 पेहेरे धे : तो, पह्या, अजीव अने अथिर पदार्थनी  
 शी शोभा १ एटले तमारा अंतरंग अने वाह्य सर्वे

उत्तम लक्षणो भविर्जीवोने आत्म सुख काजमा  
 पुष्ट सहायकारी कारणो द्वे. नाथनुं महाविद्याल  
 कृपालपणुं शुद्ध बोधधी ह्मने जणाय छे पण जे  
 भाव जीव नमारा परम शुद्ध बोधने अति सन्माने  
 आदरे अने तन्मय थई आत्म तत्त्वनी शुद्धना करे  
 ते सिद्धि पामे ॥ १२ ॥

पामे आत्म ज्ञान दोष दुःख सहु टले हो  
 लाल दोष० ॥ सीधे आत्म काज अचल  
 कमला मले हो लाल अचल० ॥ पूज्यनी  
 पूजा आपे शिवधर वासने हो लाल के शिव०  
 देवचंद्र मुनि मनसुख सहज विलासने हो  
 लाल के सहज० ॥ १३ ॥

अर्थ:-तमारी आशा सेवी जे जीव आत्म बोध  
 पामे तेना संघ दोषो अने दुःखो टले अने आत्म  
 कार्य सिद्धि भाय वली केषलज्ञानादि अक्षय अचल  
 लक्ष्मी मले. एहवा त्रिभुवन पूज्य शिवकर स्वा-  
 मिनी सेवा शिवधर वास . . . . . छे. देवमं-  
 चंद्रमा समान शिवकर

मनसुख परमंगे करी सेपतां सहज आत्मिकविलास  
 पामे ॥ १३ ॥ ॥ संपूर्ण ॥

॥ अथ प्रयोविंशतिम श्री स्यंदन जिन स्तवन  
 ॥ शानि जिनेश्वर केसर अर्चित जग धणीरे आ०  
 ॥ ए देशी ॥

स्यंदन जिनवर परम दयाल कृपालुओरे  
 ॥ जग सोहन भवि घोहन देव मयालुओरे  
 ॥ दे० ॥ ए आंरुणी ॥ परपद ग्रहणे जनजन  
 वांधे कर्मनेरे, अधिर पदारथ ध्यातां किम लहे  
 धर्मनेरे कि० जडचल जगनी पर्यं छे पुदगल  
 परिणतिरे, ध्यातां धीरज कंपे आप लहे न  
 संगुण रतीरे लहे० ॥ १ ॥

अर्थः-गत योगिशीना तेविशमा तीर्थकर श्री  
 स्यंदन जिनेश्वर परम दयाल अने परमकृपाल छे.  
 जगत्मां जे जे लोको शुद्धमार्गना अजाण दया अने  
 कृपा करे छे ते दया थोडां दिनने माटे अने आस्त्र  
 आयु पर्यंत कोईकने बाह्य हितकारी पण यह शक

द्वितीय भागों से गुणात् द्विज विष्णो जगत्तु तेषु  
 के गुणान्तरं गुणा मभिर मे अने एकान्तिक सुखं  
 कारण नभा वनी से गुणान्तरं सुख भव भोगु से  
 अने अंशक स्वामीनी गुणात्तु जे आत्मिक गुणो अने  
 आत्मिक स्वमेव सुखसादृश्यात् तेषां सादृश्यात्  
 कालानुषां निमित्त निराकृत्य अणल पद्य स्वमेव  
 सुखं कारण से सादे मनु परम कृपात्तु द्विः वभुगी  
 अर्थ उत्तमता शोभा वामेत्ता नं के वातात्तु मनुष्य  
 अने स्वामीनी सुखनानिष्ठां मनुष्यां द्यतरो विद्या-  
 धरां मणधरां मुनिः प्रेमानिरो अने मरनारीउना  
 धारं जेनां मुनीनी स्वमेव शोभा हमेजां करवा  
 करे धे. अविजापोने शूद्र बाधना दाताह धं, केवल-  
 ज्ञान केवलहृद्ये करी देदित्यमान देनं सर्वं जायोना  
 सोदध्ना परम मयानु धं. संसारी जीरो गुणल गुण  
 पर्यायरूप परपद महण करवार्था एतेल परिग्रह पदो  
 कर्म पाये धं ते परिग्रह तां निधायथो परधस्तुने  
 अहंपणे अहंयु ते एकं अंभेदपणे जाणुथो अने  
 व्येहंरिधां पाठां परिग्रहं नयविधे तथा अंभं परि-  
 ग्रहं पाह विधे धं. पुद्गलिकं अंधिरं पदार्थने ध्याती  
 वित्त धिरतां पामतुं नधी अने अलचिसंपाती,

हृषिं भ्रातृमक धर्मने पामो शक्तो नथी. पुद्गल  
 रिणति पोते जड एटले अचेतन छे अने चलके०  
 स्फुटि असख्योत समयधी घघीरे स्थितिवाही  
 थी चली अनंता जीषोए अनंता पुद्गल द्रव्यने  
 नितो चार लोधा अने चिष्टा मूत्र रस रुधिर मांस  
 दे अस्थि मज्जा चौर्यादिकपणे परिणमाव्या अने  
 रिवार मृतकपणे छाडेया तो एवी अधिर परिण-  
 ना पाणल जे जीषो लाग्या ते केम पिरता पामे।  
 ने तेनु ममे वषन काया निवृत्ति पामे नहि तो  
 आत्मधर्म अने ते धर्मनु निवृत्तिरूप सुख केम  
 मे। एवी अधिर पुद्गल परिणति पाणल जे काने  
 जीषो कपायमान धाय अने शुद्धात्म गुणमा  
 ते पिरता समाधि पामे नहि ॥ १ ॥

निरमल दर्शन ज्ञान चरणमथ आतमारे ॥  
 जेपदे रमणे भ्रगटे पद परमातमारे ॥ पद०  
 हादिकर्मा शहीन तन्मय ते कछोरे ॥ शुद्ध  
 ह्यांमां तहीन तिण शिवपद छोरे ॥  
 ण० पां २ ॥

पास छे रे ॥ कर्म ॥ ४ ॥

अर्थ: वस्तु गुणती त्याच्याद्वारा शब्द देशना  
 ऐ के जेथी शब्द साधन अने साधना साधनाकार  
 जगतां गळे छे ते आजाते जे जदि बहु मन्माने  
 आरे ते बर्बादि हागादि विभावना प्रवेश करे मदि  
 त्यांघुर्षा जिन बचनंतु मन्मान आशुं नर्षी त्यां-  
 घुपी दुःखे भवेको भवदाग कागम छे अने पर-  
 परिष्कति मन्माने एदळे परमदणंज आटे कर्मना  
 पास छे ॥ ४ ॥

आत्म शक्ति स्वतंत्र लब्धो जिन याण-  
 धीरे ॥ साधो शिव मग शुद्ध धुयल दृढ  
 ध्यानधीरे ॥ शुक्ल० ॥ शुद्ध नये लक्षि  
 द्रव्यने 'निःस्पृह' अन्यधीरे ॥ समभावे निज  
 ध्यान तनु भव भय नधीरे ॥ तंसु० ॥ ५ ॥

अर्थ:-आत्म शक्ति परंतत्र नर्षी एण पोते  
 आत्म शक्ति जाणी नर्षी त्यांसुर्षा शुद्धगत ममत्य  
 यक्षे पोते अनंत परंतत्रता भोगये छे ह्ये अंधसर  
 मक्ष्यो माटे जिनेश्वरना त्यादाद उपदेशयो आत्म-

एकि स्वतंत्रपणे जाणो अने शुद्ध शिष्यमार्ग हट  
 शुद्धध्याने साधो. शुद्ध नये स्वपर द्रव्यने मिश्र  
 नाथो अन्य द्रव्यधी निस्पृह धरि समभावे निज  
 शुद्धात्म पद ध्याय तेने भय भय नथो ॥ ५ ॥

पंच महाव्रत पंचाचार श्री जिन वंदेरे ॥  
 पंच सामिति व्रण गुप्ति समभावे सधेरे ॥  
 सम० ॥ ज्ञान ध्यान किरिया साची समभाव  
 धीरे ॥ साध्य शून्य किरिया कष्ट शिवपद  
 नथारे ॥ कष्टे० १. ६ ॥

अर्थ: जिनेश्वरे पंच महाव्रत अने ज्ञानाचारादि  
 पंच विषे आचार कळो हे तथा पंच सामिति अने  
 व्रण गुप्ति प्ररूपी हे ते सर्वे पूर्ण समभाव अर्थे हे  
 अने राग द्वेष तजी समभावा राखी व्रत आचार  
 सामिति गुप्ति साधीण तोच सध्याय वली ज्ञान ध्यान  
 अने किरिया समभाव सहित होय तोच साचां  
 जाणव्या राग द्वेष सहित जाणवुं ते ज्ञान नथी,  
 राग द्वेष सहित ध्यान ते शुभध्यान नथी, राग द्वेष  
 सहित किरिया ते उत्तम किरिया नथी पण राग द्वेष



॥ अथ चउविंशतिम संप्रति जिन स्तवन ॥

संप्रति जिनवर पद नमो भवि ध्यावोरे ॥

साधो शुद्ध निज साध्य परम पद पावोरे ॥

आतित समय चोवीशमा ॥ भ० ॥ प्रभु सम  
हे निरुपाध्य ॥ प० ॥ १ ॥

अर्थः-गत चोविंशतीना चोविंशतीना तीर्थकर  
संप्रति जिनवरना पद कमलना नमस्कार करी हं  
भवि जीपो ! तमे सिद्ध समान निज शुद्ध साध्य  
ध्याई, साधना कारक प्रवृत्ति करीने शुद्ध साध्य  
साधो-सिद्ध करो. मन बचन काय अणे योग धिर  
करी स्वपरिणति शुद्ध साध्यमा एकत्वपणे लपहीन  
करी निर्मल ध्याने शुद्ध साध्य ध्याई के जेथा  
शाश्वत परमात्म पद वामो एटहे प्रभुजी समान  
उपाधि रहित पाउ ॥ १ ॥

शुद्ध साध्य जाण्याविना भवि० ॥ साध्या

साध्य अनेक ॥ प० ॥ आणा विण निज

छंदथी भवि० ॥ सुख पास्यो नहि छेक ॥

प० ॥ २ ॥

अर्थः-शुद्ध साध्य जाण्याविना असाध्य एवही पुद्गल परिणति जे स्त्री, पुरुष, संतान, लोणी, शीर्ष, हाड, मांस, धन आदि साधयाने अनेक प्रकारे अम करणा मन घडन पल युद्धि प्रयत्नांची पण ते पुद्गल परिणति आपणो घडू नहि तेथी कर्म बंध करी वार गति संसार कंतारमां भय्यो स्व सत्यां अने मोक्ष साधवा स्वधंदताए अने जेन वचन आजाण पुरुषोना कला प्रमाये घणाए क्रिया कष्ट करणां अने जिन मार्गमां कला प्रमाये पण साध्य शुन्य एकांति क्रिया साधी तेथी केवल संसार सघायां अने निवृत्ति रूप साधुं सुख लेश पण पाय्यो नहि ॥ २ ॥

स्यादवाद प्रभु वचनथी भवि० ॥ लहि शुद्धात्म साध्य ॥ परम० ॥ शुद्ध साधना सेवतां भवि० ॥ नाशे सर्व उपाधि ॥ परम० ॥ ३ ॥

अर्थः-प्रभुजीनां स्यादात्मव वचन सांभली शुद्धात्म साध्य जाणी शुद्ध साधना सेविण-साधीए तां सकल कर्म उपाधि नाशे ॥ ३ ॥

ममत्त उपाय ॥ परम० ॥ रागादिक बश जीव  
 ए ॥ भवि० ॥ कीधा अनेक अपाय ॥  
 परम० ॥ ७ ॥

अर्थ:-ज्यांसुधी आत्म शुद्धता जाणी नथी  
 त्पांसुधी परपदमां ममत्त उपजे छे तेथी राग द्वेष  
 मोहादि बश थई जीवे पोताने अनंत दुःख उपजे  
 एहवा उपाय लखा करया ॥ ७ ॥

तुज वाणिधी में लक्षा ॥ भवि० ॥ निज  
 गुण द्रव्य प्रजाय ॥ परम० ॥ पर गुण द्रव्य  
 प्रजायनुं ॥ भवि० ॥ ममत्त तजे सुख थाय  
 ॥ परम० ॥ ८ ॥

अर्थ:-तमारी वाणी बदे पर द्रव्य गुण पर्या  
 यधी भिन्न निज द्रव्य गुण पर्याय जाएवा तेथ  
 जाणुं तुं के पर द्रव्य गुण पर्यायनुं ममत्त तजवा  
 चीज सर्वे दुष्ट अपायो नाश थई स्वनेत्र सुख प्रगा  
 थदो ॥ ८ ॥

जाण्युं आत्म स्वरूप में ॥ भवि० ॥ बलि  
 कौषुं निरधार ॥ परम० ॥ धरण निज गुण  
 रमणमां ॥ भवि० ॥ तजि पर रमण प्रचार  
 ॥ परम० ॥ ९ ॥

अर्थ:-मैं आत्मस्वरूप जाण्युं करने सिद्धांत,  
 नयो, प्रमाणो करने माहरी हृदिवहे निरधार करयुं  
 हवे पर रमणको चालो तजो शुद्ध स्वभावावायो  
 निज गुण रमण करुं ग माहरी इच्छा छे ॥ ९ ॥

धीर धीर निज धीर्यने ॥ भवि० ॥ राखी  
 अचल गुण ठाम परम० ॥ परसंगे चल नवि  
 करुं ॥ भवि० ॥ नहि परधी निज काम ॥  
 परम० ॥ १० ॥

अर्थ:-धीर धीर धीर निजात्म धीर्यने स्वरूपभा-  
 वमां स्थिर राखी पटले ज्ञान दर्शनादि निज गुण  
 स्थानकमां धीर्य अचलपण्यो राखी पुद्गलादि परसंगे  
 धीरे चलारमान करुं नहीं वेमके माहरे परद्रव्यधी  
 कोई काम नथी. हे मोक्षामिलापी अर्थो ! तमे सुवें

एज प्रमाणे शुद्ध साध्य माधो. धीर पुरुषोनी एज  
मार्ग छे. विषय कपायादिके धैर्य राखी एकता नधी  
ते शिवमार्ग यी रोते साधो शके ? माटे धीर्य भवल  
राख्युं एज श्रेय छे ॥ १० ॥

पुद्गल खल संगे कर्युं ॥ भवि० ॥  
आत्म वीर्य चल रूप ॥ परम० ॥ जड संगे  
दुःखीउं थयो ॥ भवि० ॥ थइ बेठो जड भूप  
परम० ॥ ११ ॥

अर्थ:-जीवोए अचेतन जड एहवा खल पुद्गल  
संगे आत्म धीर्य चल कर्युं तेथी जड पुद्गलोमां  
मली जडतावत् जड थई बेठो तेथी अन अधिकारी  
छतां जड पदार्थीनां अधिकारी-भूप राजा थई बेठो  
तेथी महान् दुःखीउं थयो ॥ ११ ॥

दर्शन ज्ञान चरण सदा ॥ भवि० ॥ आ-  
राधो तति दोष ॥ परम० ॥ आत्म शुद्ध  
अभेदी ॥ भवि० ॥ लहिये गुण गणं पोष ॥  
परम० ॥ १२ ॥

अर्थः-दरशने ज्ञान अने चारित्र्यने ए त्रणेना  
 भाठ भाठ दोष अने प्रमाद तजी सदा आराधो.  
 आत्मअंगना अने आत्मगुणना व्यवहारधी ज्ञान  
 दर्शन चारित्र्य एहंसां मुख्य त्रण भेद छे अने निश्चय  
 धी आत्म रत्नत्रयधी अभेदपणे एकज छे एत त्रणे  
 गुणो आत्माधी अभेदपणे घ्याईए तोज निधिबल्प  
 घ्याम अने अनंत निर्मल गुणोना पुष्ट आनंद आवे।११।

दरशन ज्ञान विराधना ॥ भवि० ॥ ते-  
 हिज भव भय मूल ॥ परम० ॥ निज शुद्ध  
 गुण आराधना भवि० ॥ ए शिव पद अनुकूल  
 ॥ परम० ॥ १३ ॥

अर्थः-दरशन ज्ञान चरणमय आत्मगुण विरा-  
 धना तेज कर्मबंधने कारण अने भय भयनुं मूल छे  
 आत्माधी प्रतिकूल छे, पूर्वापर हितकारी नधी अने  
 दरशन ज्ञान चरण आदि शुद्धात्म शुणनुं आराधनुं  
 एज शिवमार्ग अनुकूल छे तो मुख्य ए भाव हृदय-  
 मां धारो, एज साध्य जाणी एनी प्रशस्तताए क्रिया  
 आदरबी क्रमे ए साध्यधी अप्रशस्त पणे जे क्रिया  
 होय ते तजवी ॥ १३ ॥

शुद्ध हस्तिक सम साध्य निज ॥ भवि०  
 ॥ साधे राग रहितं ॥ परम० ॥ साध्य अपेक्षा  
 विगु क्रिया ॥ भवि० ॥ कष्ट करये नाहि हित  
 ॥ परम० ॥ १४ ॥

अर्थः-शुद्ध हस्तिक मणि ममान मतागने  
 रहेतो शुद्धात्म स्वभाय साध्य ते अने रागादिके  
 धमली अशुद्धता घडे दधी जे आत्म शुद्धता ते  
 रागादिक अशुद्धता जेम जेम तजोण तेम तेम  
 शुद्धताना अंग मगट थना जाय, रागादिक सकल  
 विभाय पूर्ण तजेथी पूर्ण शुद्धता मगट थाय तेज  
 सिद्धि जाणवी तो राग रहित थई समभाये शुद्धता  
 साधवी. प्रथम सिद्ध स्वरूप रूप शुद्धता घ्येय ध्यान-  
 मां राखी ते शुद्धताने प्रशस्तपणे उपयोग धिर  
 राग्यवामां ब्रह्मता बघारथी जे जे अमशस्त भावोधी  
 उपयोग चलायमान थतो होय ते ते अमशस्त भावो  
 तजवा एम सिद्धि थाय पण साध्य निरपेक्ष क्रिया  
 कष्ट करवाधी काई हित थाय नहि पण उलटं भव  
 भ्रमणादि अहित बघे ॥ १४ ॥

परम दयाल कृपालुआ ॥ भवि० ॥ देव-

चंद्र शिव रूपं ॥ परम० ॥ शिव कमला मन-  
सुख लहे ॥ भवि० ॥ शाश्वत आत्म स्वरूप  
॥ परम० ॥ १५ ॥

अर्थः-परम दया अने कृपावंत देवमां चंद्रमां  
समान संप्रति जिनघर पोते शिपरूप ॥ तेमनी  
प्राज्ञा मनमां सुरी करि सेपतां शिवलक्ष्मी पामीए  
एव शाश्वत आत्म स्वरूप पामीए ॥ १५ ॥ संपूर्ण ॥



## ॥ कलस ॥ हरिगीत छंद ॥

गत समयना चौबीश जिननी, स्तयन चौबीशी  
 करी । मुनि देवचंद महंन हितकर सार जश कीरती  
 बरी ॥ द्रव्यानुयोग गंभीर एहनो अर्थ जन सुगुरा  
 लहे । मतिमंद न लहे अरथ एहनो साध्य शून्य  
 क्रिया चहे ॥ १ ॥ में तनुमतो इह अर्थ कीषो यथा-  
 शक्ति प्रमाणमां । बहु सूत्र ग्रथ प्रमाण जोई भव्य  
 हेजां घ्यानमां । उत्सृष्ट दोष दुरे करीने स्यादवाद्  
 सुनय रसे । जे आदरे जिन वचन ते निज आत्म  
 अनुभव रस वसे ॥ २ ॥ एकवीश स्तयनो हाथ  
 लाव्यां तीन स्तयन मह्यां नहीं । चौबीशमा शिष्य  
 कर श्री जिनधी स्तयन में रचियां सही । शुध नय  
 निक्षेप प्रमाण युक्ते अर्थ एह विचारिये । उपयोग  
 शुद्धे धीर बुद्धे इष्ट परिणति वारिये ॥ ३ ॥ शृद्धात्म  
 परिणति आदरी उपयोग धिरता राखिये ॥ निज  
 ज्ञान दरशन वरण धीरज सुमति अनुभव चाहिये ।  
 छंगणीश पांसठ फाण्गुणे सुदि पुनम इंदु निरमलो  
 मन रंगशं ए अर्थ करतां आत्मगुण लखो ऊजलो  
 ॥ ४ ॥ जिन आणसंगी तत्त्व रंगी अभ्यना आग्रह  
 बडे । दाहोद नगरे अर्थ कीषो भव्य धर्म रसे चडे ।

द्वयानुरोग दुरे करे सचि पाप ताप संतापने । शिव  
 भग "मनसुख"रंग पिलसे लही आप प्रतापने ॥५॥

( संपूर्ण )



# श्रीजयमल्ल काव्य-कीर्तिलता

सन्निधि

उपप्रवर्तक सन्तरत्न स्वामीजी श्रीब्रजलालजी महाराज

सम्प्रेरणा

युवाचार्य श्री मिश्रीमलजी महाराज 'मधुकर'

रचयिता

पं० गोपीकृष्ण व्यास

एम० ए०, साहित्याचार्य

सम्पादक-अनुवादक

डॉ० छगनलाल शास्त्री

(एम. ए. हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत तथा जैनशास्त्र)  
पी-एच० डी०, काव्यतीर्थ विद्यामहोदय)

सहयोगी

मुनि विनय : मुनि महेन्द्र

प्रकाशक

श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ

नोला चान्दावर्तो का (राजस्थान)